अग्निशिखा

अखिल भारतीय पत्रिका

अप्रैल २०२२

शरीरधारी द्वैत शक्ति

अग्निशिखा अप्रैल २०२२ वर्ष ५२, अंक ९, पूर्णांक ६२०

विषय-सूची

शरीरधारी द्वैत शक्ति

(श्रीअरविन्द तथा श्रीमाँ के वचन)

सन्देश/सम्पादकीय		३
श्रीमाँ के विषय में श्रीअरविन्द के कुछ वचन		५
श्रीअरविन्द के विषय में श्रीमाँ के कुछ वचन		१५
दो जो एक ही हैं		२७

पुरोधा

दैनन्दिनी		३७
'दिव्य शरीर में दिव्य जीवन' : सत्ता के स्तर और भाग	नवजातजी	३९
सेतु का भार तो मैंने सहा वत्स!	वन्दना	४२

अग्निशिखा

श्रीअरविन्द सोसायटी की मासिक पत्रिका

वार्षिक शुल्क : एक वर्ष—२००रु.; तीन वर्ष—५८०रु.; पाँच वर्ष—९६०रु.

संस्थापक : श्रीअरविन्द सोसायटी

मुद्रक : स्वाधीन चैटर्जी, श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस

प्रकाशक : प्रदीप नारंग, श्रीअरविन्द सोसायटी

प्रकाशक स्थल : सोसायटी हाउस, ११ सैं मार्तैं स्ट्रीट, पुदुच्चेरी ६०५००१

मुद्रण-स्थल : श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, नं. ३८, गूबैर ऐवेन्यू, पुदुच्चेरी ६०५००१, भारत

सम्पादिका : वन्दना

Registered with the Registrar of Newspapers for India: No. 18135/70

दूरभाष संख्याएँ (०४१३) २३३६३९६-९७-९८

Email: info@aurosociety.org

Website: www. aurosociety.org

सन्देश

श्रीमाँ की सतत उपस्थिति अभ्यास के द्वारा आती है; साधना में सफलता पाने के लिए 'भागवत कृपा' अत्यन्त आवश्यक है, पर अभ्यास ही वह चीज़ है जो 'कृपा' के अवतरण के लिए तैयारी करती है।

तुम्हें अन्दर की ओर जाना सीखना होगा, केवल बाहरी चीज़ों में ही रहना बन्द करना होगा, मन को स्थिर करना होगा और अपने अन्दर होने वाली श्रीमाँ की क्रिया के विषय में सचेतन होने की अभीप्सा करनी होगी।

CWSA खण्ड ३२, पृ. १७२ **श्रीअरविन्द**

सम्पादकीय : एक अवतार ही दूसरे अवतार के रहस्य को हमारे सम्मुख उद्‌घाटित कर सकता है। श्रीमाँ के रहस्य को श्रीअरविन्द के सिवाय और कौन प्रकट कर सकता है और श्रीमाँ के सिवाय कौन है जो श्रीअरविन्द के रहस्य को हमारे सामने उजागर कर सके? उनका एक साथ आना एक 'नूतन युग' का, एक 'नूतन सर्जन' का, एक 'नवयुग' की उत्पत्ति का प्रतीक है। हम सचेतन हों या न हों, नवयुग ने पदार्पण कर लिया है और यह अधिकाधिक अन्तरात्माओं में प्रवेश कर रहा है। इसका प्रभाव निःशब्द होता है, उसी तरह जैसे सूरज की किरणें चुपके से, कोमलता के साथ धरती को जैसे ही छू लेती हैं, धरा असंख्य नयी सम्भावनाओं के साथ सजीव हो उठती है।

यह अंक श्रीअरविन्द तथा श्रीमाँ—दो युग्म अवतारों के प्रति हमारा अर्घ्य तथा हमारा कृतज्ञता-ज्ञापन है।

The One whom we adore as the Mother is the divine
Conscious Force that dominates all existence, one and yet so many-sided
that to follow her movements is impossible even for the quickest mind
and for the freest and most vast intelligence. The Mother is the
consciousness and force of the Supreme and for above all she creates.
But something of her ways can be seen and felt through the embodiments
and the more seizable because more defined and limited temperament
and ~~movements~~ action of the goddess forms in whom she consents to be
manifest to her creatures.

जिस 'एक' की हम माँ के रूप में पूजा करते हैं वे भागवत चित्-शक्ति हैं जो सारी सृष्टि पर छायी हुई हैं। एक होते हुए भी उनके इतने अधिक पहलू हैं कि तेज़-से-तेज़ मन और अधिक-से-अधिक स्वतन्त्र और विशाल बुद्धि के लिए भी उनकी गति का अनुसरण कर सकना असम्भव है। माता परम-पुरुष की चेतना और शक्ति हैं और वे अपनी सारी सृष्टियों के बहुत ऊपर हैं। फिर भी उनकी गतिविधि की कुछ चीज़ें उनके साकार रूपों के द्वारा देखी और अनुभव की जा सकती हैं और ज़्यादा आसानी से पकड़ में आ सकती हैं क्योंकि भगवती माँ जिन दिव्य रूपों में अपने जीवों के सम्मुख प्रकट होना स्वीकार करती हैं उनके स्वभाव और कर्म ज़्यादा निश्चित और सीमित होते हैं।

CWSA *खण्ड ३२, पृ. २* *श्रीअरविन्द*

श्रीमाँ के विषय में श्रीअरविन्द के कुछ वचन

जीवन-पथ पर चलने के लिए दो आवश्यक चीज़ें

जीवन में सब प्रकार के भय, संकट और विनाश से बच कर चलने के लिए दो ही चीज़ों की आवश्यकता है, दो चीज़ें जो सदा साथ रहती हैं —एक तो भगवती माँ की कृपा, और दूसरी, तुम्हारी ओर से ऐसी आन्तरिक स्थिति जो श्रद्धा, निष्ठा और समर्पण से पूर्ण हो। तुम्हारी श्रद्धा विशुद्ध, निश्छल और पूर्ण हो। मन और प्राण की अहंकारमयी श्रद्धा— जो महत्त्वाकांक्षा, अभिमान, दम्भ व मानसिक अहंकार से और प्राण की स्वेच्छाचारिता, वैयक्तिक माँग तथा निम्न प्रकृति की तुच्छ सन्तुष्टियों की कामना से कलुषित होती है—एक निम्न और धुँए से ढकी अग्निशिखा है जिसकी लौ ऊपर स्वर्ग की ओर नहीं उठ सकती। यही मानो कि तुम्हारा जीवन तुम्हें भगवान् के कार्य के लिए और भगवान् की अभिव्यक्ति में सहायता देने के लिए ही मिला है। केवल भागवत चेतना की विशुद्धता, शक्ति, ज्योति, विशालता, स्थिरता और आनन्द और उस चेतना का यह आग्रह कि उसके द्वारा तुम्हारे मन, प्राण और शरीर का रूपान्तर हो—इसके सिवा और कुछ न चाहो। कुछ मत माँगो, माँगो केवल दिव्य आध्यात्मिक और अतिमानसिक सत्य, उस सत्य की सिद्धि पृथ्वी पर, तुम्हारे अपने अन्दर और उन सबके अन्दर जो इसके लिए बुलाये और चुने गये हैं। उन परिस्थितियों को माँगो जो इस सत्य की सृष्टि के लिए और इसकी विजय के लिए आवश्यक हैं।

तुम्हारी निष्ठा और समर्पण सच्चे और सम्पूर्ण हों। जब तुम अपने-आपको देते हो तो पूरी तरह दो, बिना किसी माँग के, बिना किसी शर्त के और बिना किसी संकोच के दो, ताकि तुम्हारे अन्दर जो कुछ है वह सब भगवती माँ का हो जाये, और कुछ भी अहं के लिए या अन्य किसी शक्ति को देने के लिए बच न रहे। तुम्हारी श्रद्धा, निष्ठा और समर्पण जितने अधिक पूर्ण होंगे, भगवती माँ की कृपा और रक्षा भी तुम्हारे साथ उतनी ही अधिक रहेंगी। और जब भगवती माँ की कृपा और अभय-हस्त तुम पर हैं तो फिर कौन-सी चीज़ है जो तुम्हें स्पर्श कर सके या जिसका तुम्हें भय हो? कृपा का छोटा-सा कण भी तुम्हें सब कठिनाइयों, बाधाओं और संकटों के पार

ले जायेगा; क्योंकि यह मार्ग माँ का है, इसलिए किसी भी संकट की परवाह किये बिना, किसी भी शत्रुता से प्रभावित हुए बिना—चाहे वह कितनी ही शक्तिशाली क्यों न हो, चाहे वह इस जगत् की हो या अन्य अदृश्य जगतों की—इसकी पूर्ण उपस्थिति से घिर कर तुम अपने मार्ग पर सुरक्षित होकर आगे बढ़ सकते हो। इसका कृपा-स्पर्श कठिनाई को सुयोग में, विफलता को सफलता में और दुर्बलता को अविचल बल में परिणत कर देता है। क्योंकि भगवती माँ की कृपा परमेश्वर की अनुमति है। आज हो या कल, उसका फल निश्चित है, पूर्वनिर्दिष्ट, अवश्यम्भावी और अनिवार्य है।
CWSA खण्ड ३२, पृ. ८-९

दिव्य माँ के कार्य करने के तरीक़े

लेकिन सावधान रहो, अपने छोटे से पार्थिव मन से माँ को समझने और परखने की कोशिश मत करो क्योंकि यह मन अपने संकुचित तर्क, भूलभरी राय, अपने झगड़ालू, आक्रमणशील अगाध अज्ञान और तुच्छ आत्मविश्वासी ज्ञान के भरोसे अपने से परे की चीज़ों को मापने में मज़ा लेता है। अपने अर्ध-प्रकाशित अज्ञान की कारा में बन्द मानव मन दिव्य शक्ति के चरणों की बहुमुखी स्वाधीनता का साथ नहीं दे सकता। उनकी दृष्टि और क्रिया की द्रुत गति और जटिलता उसकी लड़खड़ाती समझ को पीछे छोड़ जाती है। माँ की गति की लय उसकी लय नहीं है। उनके अनेक और भिन्न व्यक्तित्वों के द्रुत परिवर्तनों से, उनके लयों के निर्माण और छन्दों के भंग से, उनके गति को बढ़ाने और घटाने से, एक या अन्य समस्या पर विचार करने के उनके विभिन्न तरीक़ों में कभी एक और कभी दूसरी पद्धति के ग्रहण करने और त्याग देने और फिर दोनों को मिलाने वाले तरीक़ों में विमूढ़ बना मन अज्ञान के आवर्त में से दिव्य प्रकाश की ओर चक्राकार और वेगपूर्वक उड़ती हुई पराशक्ति की पद्धति को नहीं समझ सकेगा। ज़्यादा अच्छा यह है कि तुम अपनी अन्तरात्मा को उनकी ओर खोलो और अपनी चैत्य दृष्टि के द्वारा अनुभव और दर्शन करके तृप्ति-लाभ करो क्योंकि केवल वे ही दिव्य सत्य को सीधा उत्तर दे सकती हैं। उसके बाद स्वयं माता मन, हृदय, प्राण और भौतिक चेतना में उनके चैत्य तत्त्वों के द्वारा अपनी कार्य-प्रणाली और अपनी प्रकृति को प्रकट कर देंगी।

मध्यस्थ शक्ति

पार्थिव चेतना के विकास में अतिमानसिक परिवर्तन एक अपरिहार्य और आदेशित वस्तु है क्योंकि इसका ऊर्ध्वमुखी आरोहण समाप्त नहीं हुआ है और मन इसका अन्तिम शिखर नहीं है। लेकिन वह परिवर्तन आ सके, रूप ले सके, सहन कर सके, इसके लिए आवश्यकता है नीचे से पुकार की, उसे मान्यता देने की, और जब प्रकाश आये तो उसे अस्वीकार न करने की और वहाँ आवश्यक है, ऊपर से सर्वोच्च प्रभु की स्वीकृति की। वह शक्ति जो उस स्वीकृति और पुकार के बीच मध्यस्थता करती है, वह दिव्य माँ की उपस्थिति और शक्ति है। कोई भी मानव-प्रयास या तपस्या नहीं, केवल माँ की शक्ति ही उस ढक्कन को तोड़ कर, आवरण को चीर कर, मानव-पात्र को रूप दे सकती है और अन्धकार, मिथ्यात्व, मृत्यु तथा दुःख-दर्द के इस जगत् में 'सत्य' और 'प्रकाश' तथा 'दिव्य' जीवन और अमर्त्य 'आनन्द' उतार ला सकती है।

CWSA खण्ड ३२, पृ. २५, २६

प्रत्येक जो श्रीमाँ के प्रति मुड़ा है

वह प्रत्येक व्यक्ति जो श्रीमाँ की ओर मुड़ा हुआ है, मेरा योग कर रहा है। यह मानना बड़ी भूल है कि तुम पूर्णयोग "कर" रहे हो, यानी यह मानना कि तुम स्वयं अपने प्रयास के द्वारा योग के सभी पहलुओं को क्रियान्वित और संसिद्ध कर रहे हो। कोई मानव सत्ता यह नहीं कर सकती। तुम्हें करना यह चाहिये कि स्वयं को माँ के हाथों में सौंप दो और उनकी सेवा, भक्ति, अभीप्सा के द्वारा अपने-आपको उनकी ओर खोलो; तब अपने प्रकाश और शक्ति द्वारा माँ तुम्हारे अन्दर कार्य करेंगी ताकि साधना की जा सके। महान् पूर्ण योगी या अतिमानसिक सत्ता बनने की महत्त्वाकांक्षा रखना और पग-पग पर अपने-आपसे यह पूछना, 'मैं उसकी ओर कितना बढ़ चुका हूँ'—बड़ी भूल है। उचित मनोभाव है—स्वयं को माँ की भक्ति में डुबो दो और वही चाहो जो माँ चाहती हैं कि तुम बनो। बाक़ी सब माँ पर निर्भर करता है कि वे तुम्हारे लिए क्या निश्चय करती हैं और तुम्हारे अन्दर कैसे क्रिया करती हैं।

CWSA खण्ड ३२, पृ. १५१-५२

वे हमेशा उपस्थित रहती हैं

कभी-कभी मैं अपने-आपको माँ से बहुत दूर क्यों अनुभव करता हूँ? मैं उन्हें हमेशा अपने साथ अनुभव करना चाहता हूँ।

श्रीमाँ हमेशा तुम्हारे साथ होती हैं। तुम्हें उन्हें हमेशा अपने साथ अनुभव करने के लिए बस अज्ञान की शक्तियों को उठा फेंकना है।

आपने कहा है, "हमेशा इस प्रकार व्यवहार करो मानों श्रीमाँ तुम्हारी ओर देख रही हों। क्योंकि वास्तव में वे हमेशा उपस्थित रहती हैं।" क्या इसका यह अर्थ है कि श्रीमाँ हमारे सभी मामूली विचारों को भी सदा ही जानती हैं, या फिर जब वे एकाग्र होती हैं केवल तभी जानती हैं?

यह कहा गया है कि श्रीमाँ हमेशा उपस्थित रहती हैं और तुम्हारी ओर देख रही हैं। इसका मतलब यह नहीं कि अपने भौतिक मन में वे हमेशा तुम्हारी ही बात सोचती रहती हैं और तुम्हारे विचारों को देखती रहती हैं। इसकी कोई आवश्यकता नहीं, क्योंकि वे सर्वत्र हैं और अपने विश्वव्यापी ज्ञान के द्वारा सर्वत्र कार्य करती हैं।

मुझे ऐसा लगता है कि हम अपने विचारों को जितना अधिक उनके प्रति खोलते हैं उतने अधिक हमें उनकी शक्तियों के प्रति खुल भी जाते हैं और उनके प्रति हमारा समर्पण अधिक प्रभावशाली बन जाता है। क्या मैं सही हूँ?

हाँ, एकदम सही।

किस अर्थ में श्रीमाँ "सर्वत्र" हैं? क्या इसलिए कि वे विश्व में अवतरित हुई हैं और इसके पीछे काम करने वाली सभी शक्तियों के बारे में उन्हें पूर्ण ज्ञान है? मेरे ख़याल से विश्व या "सर्वत्र" में भौतिक स्तर भी आ जाता है। अगर ऐसा है तो क्या भौतिक स्तर पर होने वाली सभी घटनाओं को वे जानती हैं?

इस बात तक को कि आज लॉयड जॉर्ज ने क्या जलपान किया अथवा रूज़वेल्ट ने नौकरों के विषय में अपनी धर्मपत्नी से क्या कहा? भला क्यों माँ को भौतिक स्तर पर होने वाली सभी घटनाओं को मनुष्य के ढंग से "जानना" ही चाहिये? शरीर धारण करने पर उनका कार्य होता है वैश्व शक्तियों की क्रियाओं को जानना और अपने कार्य के लिए उनका उपयोग करना; बाक़ी चीज़ों के सम्बन्ध में, जिन चीज़ों को जानने की उन्हें ज़रूरत होती है उन्हें वे जानती हैं—कभी तो अपनी आन्तरिक सत्ता के द्वारा और कभी अपने भौतिक मन के द्वारा। अपनी विश्वव्यापी आत्मा के अन्दर उन्हें समस्त ज्ञान प्राप्त है, लेकिन वे केवल उसी को सम्मुख लाती हैं जिसे सम्मुख लाने की ज़रूरत होती है, जिससे कि कार्य किया जा सके।

आपने लिखा है : "हमेशा इस तरह व्यवहार करो मानों श्रीमाँ तुम्हारी ओर देख रही हों; क्योंकि वास्तव में वे हमेशा उपस्थित रहती हैं।" दूसरी ओर आपने मुझे हाल ही में लिखा था कि उनका भौतिक रूप में सर्वत्र उपस्थित रहना सम्भव नहीं है। परन्तु मैंने जब इस विषय में माँ से पूछा तो उन्होंने कहा कि वे कई स्थानों पर व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रह सकती हैं। भला इन विरोधी वक्तव्यों में सामञ्जस्य कैसे बैठाये जाये?

अगर 'भौतिक रूप से' का मतलब तुम 'शरीर से'—उनके दृश्य ठोस जड़-भौतिक शरीर से—समझते हो तो यह स्पष्ट है कि ऐसा नहीं हो सकता। जब तुमने माँ से वह प्रश्न पूछा था तब उन्होंने तुम्हारा यह मतलब नहीं समझा था —उन्होंने कहा कि वे सर्वत्र उपस्थित रह सकती हैं, और निश्चय ही उनका मतलब अपनी चेतना में उपस्थित रहने से था। शरीर नहीं, चेतना ही हमारे अन्दर 'पुरुष', 'व्यक्ति' है, शरीर तो केवल चेतना के कार्य के लिए एक आधार और यन्त्र है। अपनी चेतना में माँ व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रह सकती हैं। वैश्व उपस्थिति, निस्सन्देह, हमेशा रहती है और विश्वगत तथा व्यक्तिगत एक ही सत्ता के दो स्वरूप हैं।

CWSA खण्ड ३२, पृ. १६९-७१

श्रीमाँ की शक्ति क्या है?

योग-शक्ति क्या है? यौगिक मनस्-शक्ति, यौगिक प्राण-शक्ति और यौगिक शरीर-शक्ति क्या हैं?

यौगिक चेतना में व्यक्ति हमेशा न केवल चीज़ों के बारे में, न केवल शक्तियों के बारे में बल्कि उस सचेतन सत्ता के बारे में अभिज्ञ हो जाता है जो शक्तियों के पीछे स्थित रहती है। वह इन सब चीज़ों के बारे में न केवल अपने अन्दर बल्कि विश्व के अन्दर भी सचेतन हो जाता है।

एक शक्ति है जो इस नयी चेतना के विकास में सहयोग देती है और उसी के साथ विकसित होती हुई उसे पूर्ण बनाने में उसकी मदद करती है। वह शक्ति यौगिक शक्ति है। वह यहाँ हमारी आन्तरिक सत्ता के सभी चक्रों में कुण्डली मारे सोयी हुई है और तन्त्र में जिसे हम कुण्डलिनी शक्ति कहते हैं उसके आधार में होती है। वह हमारे ऊपर, हमारे मस्तक के ऊपर 'भागवत शक्ति' के रूप में भी होती है, लेकिन वहाँ कुण्डलित, अन्तर्लीन, सुप्त नहीं, बल्कि जाग्रत्, कुशल, समर्थ, परिवर्धित तथा विस्तृत होती है; वह वहाँ अभिव्यक्त होने के लिए प्रतीक्षारत है, इसी शक्ति के प्रति हमें अपने-आपको उद्घाटित करना है—यह है माँ की शक्ति। मन में यह स्वयं को भागवत मनस्-शक्ति या वैश्व मनस्-शक्ति के रूप में प्रकट करती है और यह वह सब कुछ कर सकती है जो वैयक्तिक मन नहीं कर सकता; तब वह यौगिक मनस्-शक्ति होती है। जब वह उसी तरह प्राण या शरीर में अभिव्यक्त होकर क्रिया करती है तो वह यौगिक प्राण-शक्ति या यौगिक शरीर-शक्ति होती है। वह इन सभी में जाग्रत् होकर बाहर तथा ऊपर विस्फोट के साथ फूट सकती है, ऊपर से नीचे तक फैल सकती है या अवतरित होकर नीचे चीज़ों में निश्चित शक्ति बन सकती है; वह शरीर में उतर कर, वहाँ कार्य करती हुई, अपना राज्य प्रतिष्ठित कर सकती, चारों तरह छा सकती, हमारे निम्नतम को ऊपर उच्चतम से जोड़ सकती तथा व्यक्ति को वैश्वभावापन्नता में या निरपेक्षता और उत्कृष्टता में उद्घाटित कर सकती है।

CWSA खण्ड ३२, पृ. १९२

कठिनाइयाँ तथा माँ की सहायता

उचित मनोभाव है घबराना नहीं, शान्त-स्थिर बने रहना और विश्वास बनाये रखना; पर साथ में यह भी आवश्यक है कि श्रीमाँ की सहायता ग्रहण की जाये और किसी भी कारण से उनकी शुभ-चिन्ता से पीछे न हटा जाये। हमें कभी असमर्थता, प्रत्युत्तर देने की अयोग्यता के विचारों में नहीं लगे रहना चाहिये, दोषों और असफलताओं पर अत्यधिक ध्यान नहीं देना चाहिये और इन सबके कारण मन को दुःखी और लज्जित नहीं होने देना चाहिये; क्योंकि ये विचार और बोध अन्त में कमज़ोर बनाने वाली चीज़ें बन जाते हैं। अगर कठिनाइयाँ हैं, ठोकरें लगती हैं या असफलताएँ आती हैं तो उन्हें शान्त-स्थिर रह कर देखना चाहिये और उन्हें दूर करने के लिए शान्ति के साथ, निरन्तर भागवत सहायता को पुकारना चाहिये, लेकिन कभी विचलित या दुःखी या निरुत्साहित नहीं होना चाहिये। योग कोई सहज पथ नहीं है और प्रकृति का सर्वांगीण परिवर्तन एक दिन में नहीं किया जा सकता।

CWSA खण्ड ३२, पृ. २९४

समर्पण श्रीमाँ के प्रति होना चाहिये—'शक्ति' के प्रति भी नहीं, स्वयं श्रीमाँ के प्रति।

CWSA खण्ड ३२, पृ. १४७

श्रीमाँ की ओर अपने-आपको खोले रखो, उन्हें सर्वदा स्मरण करो और उनकी शक्ति को अपने अन्दर कार्य करने दो, अन्य सभी प्रभावों का त्याग करो—यही योग का नियम है।

CWSA खण्ड २९, पृ. १०९

तात्त्विक रूप से श्रीमाँ की विजय है, प्रत्येक साधक की स्वयं पर विजय। केवल तभी कोई भी बाहरी कार्य किसी सामञ्जस्यमय पूर्णता तक पहुँच सकता है।

CWSA खण्ड ३२, पृ. ३३१ श्रीअरविन्द

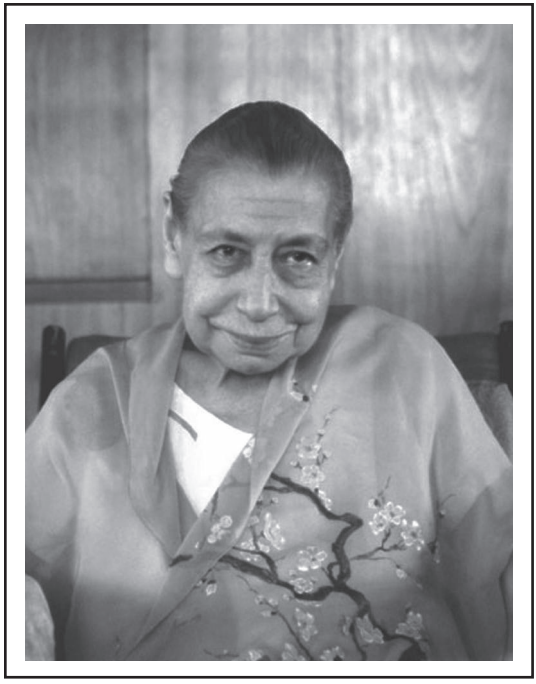

आप अपनी पुस्तक "माता" में श्रीमाँ (हमारी माँ) का ही ज़िक्र करते हैं न?

हाँ।

क्या वह "व्यष्टिभावापन्न" भगवती माता ही नहीं हैं जिन्होंने "सत्ता के इन दो विशालतर स्वरूपों की—परात्पर और विश्वगत की—शक्ति को" मूर्तिमान् किया है?

हाँ, वही हैं।

वह हमारे प्रति अपने गभीर और महान् प्रेम के वश ही यहाँ (हमारे बीच) अन्धकार और मिथ्यात्व, भूल-भ्रान्ति और मृत्यु के अन्दर अवतरित हुई हैं न?

हाँ।

CWSA खण्ड ३२, पृ. ३१ **श्रीअरविन्द**

साधना का महान् पग

श्रीमाँ श्रीअरविन्द की शिष्या नहीं हैं। उन्हें मेरे समान ही सिद्धि और अनुभूति प्राप्त थी।

श्रीमाँ की साधना छोटी उम्र से ही आरम्भ हो गयी थी। जब वे १२ या १३ वर्ष की थीं तब प्रत्येक सन्ध्या अनेक गुरु उन्हें विविध आध्यात्मिक साधना सिखाने के लिए आते। उनमें से एक साँवली एशियाई आकृति थी। जब हम पहले-पहल मिले, तब उन्होंने तुरन्त साँवली एशियाई आकृति के रूप में मुझे पहचान लिया जिसे वे बहुत पहले देखा करती थीं। श्रीमाँ यहाँ आयें और एक समान लक्ष्य के लिए मेरे साथ कार्य करें, यह मानों एक भागवत विधान था।

भारत आने के पहले ही श्रीमाँ बौद्ध योग और गीता-योग में सिद्धि प्राप्त कर चुकी थीं। उनका योग एक भव्य समन्वय की ओर बढ़ रहा था। उसके बाद यह स्वाभाविक था कि वे यहाँ आयें। मेरे योग को ठोस रूप देने में उन्होंने सहायता की है और निरन्तर कर रही हैं। उनके सहयोग के बिना यह सम्भव नहीं हो पाता।

इस योग के दो बड़े चरणों में से एक है, श्रीमाँ की शरण में जाना।

CWSA खण्ड ३२, पृ. ३६

दिव्य माँ तथा प्रकृति

श्रीमाँ को निम्नतर प्रकृति तथा उसकी शक्तियों की यन्त्रावली के साथ एक मान लेना एक बड़ी भूल है। प्रकृति यहाँ बस वह यन्त्र है जिसे क्रमविकास के अज्ञान में कार्य करने के लिए छोड़ दिया गया है। चूँकि अज्ञानी मन, प्राण या भौतिक शरीर अपने-आपमें भगवान् नहीं हैं—हालाँकि यह सब भगवान् से ही आया है—इसलिए प्रकृति की क्रियाओं को भी भगवती माता सञ्चालित नहीं कर रही हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उनका कुछ तो यहाँ उपस्थित है ही, और इस यन्त्रावली के पीछे वे क्रमविकास के उद्देश्य के लिए उसे सहारा दिये हुए हैं—लेकिन वे स्वयं जो हैं वह अविद्या की शक्ति नहीं, बल्कि 'भागवत चेतना', 'शक्ति', 'प्रकाश' तथा 'परा प्रकृति' हैं जिनके प्रति हम मुक्ति तथा भागवत उपलब्धि के लिए मुड़ते हैं।

CWSA खण्ड ३२, पृ. ६२ **श्रीअरविन्द**

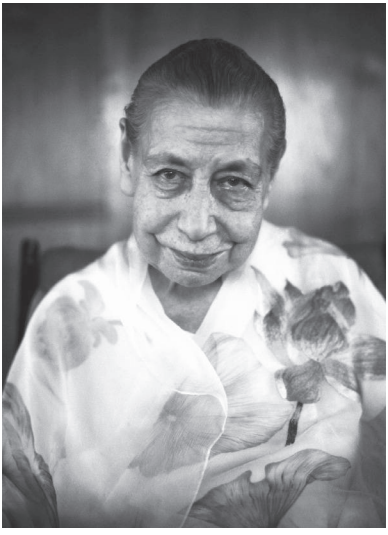

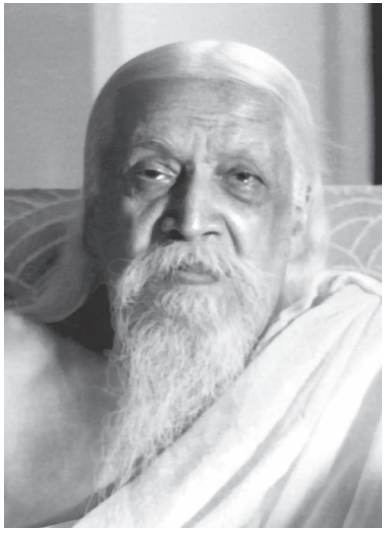

भगवान् स्वयं मार्ग पर चल कर मनुष्यों को राह दिखाने के लिए मनुष्य का रूप धारण करते हैं और बाहरी मानव-प्रकृति को स्वीकार करते हैं। पर इससे उनका 'भगवान्' होना ख़तम नहीं होता। यह एक अभिव्यक्ति होती है, बढ़ती हुई भागवत चेतना अपने-आपको प्रकट करती है। यह मनुष्य का भगवान् में बदल जाना नहीं है। श्रीमाँ अपने आन्तर स्वरूप में बचपन में भी मानवत्व से ऊपर थीं। इसलिए 'बहुत-से लोगों' का जो उपर्युक्त मत है वह भ्रमात्मक है।

CWSA खण्ड ३२, पृ. ३१ **श्रीअरविन्द**

श्रीअरविन्द के विषय में श्रीमाँ के कुछ वचन

(२९ मार्च को श्रीअरविन्द से पहली बार मिलने के बाद अगले दिन माताजी ने अपनी दैनन्दिनी में भगवान् को सम्बोधित करते हुए लिखा:)

अगर हज़ारों लोग घने-से-घने अन्धकार में धँसे हुए हैं तो कोई परवाह नहीं। जिन्हें हमने कल देखा वे तो धरती पर हैं; उनकी उपस्थिति इस बात को सिद्ध करने के लिए काफ़ी है कि वह दिन आयेगा जब अन्धकार प्रकाश में बदल जायेगा, और तेरा राज्य सचमुच धरती पर स्थापित होगा।

हे प्रभो, इस चमत्कार के 'दिव्य रचयिता'! जब मैं इस विषय में सोचती हूँ तो मेरा हृदय आनन्द और कृतज्ञता से उमड़ने लगता है, और मेरी आशा की कोई सीमा नहीं रहती।

मेरी आराधना शब्दातीत है और मेरी श्रद्धा नीरव।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. ३

श्रीअरविन्द जिस चीज़ का प्रतिनिधित्व करते हैं

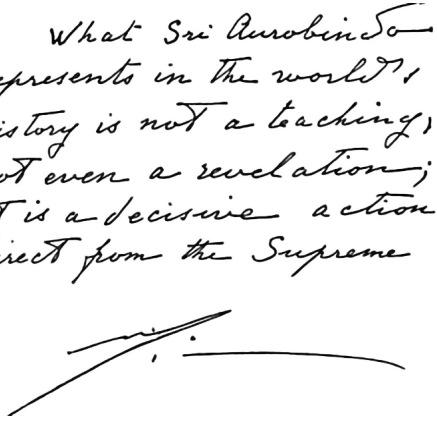

श्रीअरविन्द धरती की आध्यात्मिक प्रगति के इतिहास में जिस चीज़ का प्रतिनिधित्व करते हैं वह कोई शिक्षा नहीं है, कोई अन्तःप्रकाश भी नहीं है; वह है सीधी परम पुरुष से आने वाली एक महती क्रिया।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. ४

'वे' हमेशा हमारे साथ हैं

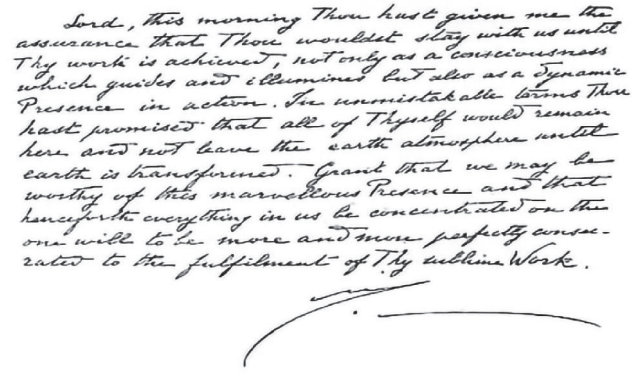

हे प्रभो, आज प्रातः तूने मुझे यह आश्वासन दिया है कि जब तक तेरा कार्य सम्पन्न नहीं हो जाता, तब तक तू हमारे साथ रहेगा, केवल एक चेतना के रूप में ही नहीं जो पथ-प्रदर्शन करती और प्रदीप्त करती है बल्कि कार्यरत एक गतिशील 'उपस्थिति' के रूप में भी। तूने अचूक शब्दों में वचन दिया है कि तेरा सर्वांश यहाँ विद्यमान रहेगा और पार्थिव वातावरण को तब तक न छोड़ेगा जब तक पृथ्वी का रूपान्तर नहीं हो जायेगा। वर दे कि हम इस अद्‌भुत 'उपस्थिति' के योग्य बन सकें, अब से हमारे अन्दर की प्रत्येक वस्तु तेरे उदात्त कार्य को पूर्ण करने हेतु अधिकाधिक परिपूर्णता से समर्पित होने के एकमात्र संकल्प पर एकाग्र हो।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. ६

श्रीअरविन्द जगत् के लिए दिव्य भविष्य का आश्वासन लाये।

*

श्रीअरविन्द धरती पर पुराने मतों अथवा पुरानी शिक्षाओं के साथ प्रतियोगिता करने के लिए कोई शिक्षा या मत लाने के लिए नहीं आये हैं, वे अतीत को पार करने का तरीक़ा दिखाने और सन्निकट और अनिवार्य भविष्य के लिए सुस्पष्ट मार्ग बनाने आये हैं।

*

श्रीअरविन्द अतीत के नहीं हैं और न ही इतिहास के।

श्रीअरविन्द वह 'भविष्य' हैं जो चरितार्थ होने के लिए आगे बढ़ रहा है।

अतः, हमें द्रुत प्रगति के लिए आवश्यक चिर यौवन को प्रश्रय देना चाहिये ताकि हम रास्ते पर फिसड्डी न बन जायें।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. ४-५

जब श्रीअरविन्द ने अपना शरीर त्यागा तो उन्होंने कहा था कि वे हमें छोड़ न देंगे। और, सचमुच इन इक्कीस वर्षों के दौरान, वे हमेशा हमारे साथ रहे हैं और जो उनके प्रभाव के प्रति ग्रहणशील और खुले हुए हैं उन्हें रास्ता दिखाते और उनकी सहायता करते रहे हैं।

उनके इस शताब्दी-वर्ष में उनकी सहायता और भी सशक्त होगी। यह हम पर निर्भर है कि हम और अधिक खुलें और जानें कि इससे लाभ कैसे उठाना है। भविष्य उनके लिए है जिनमें एक वीर की अन्तरात्मा है। हमारी श्रद्धा जितनी अधिक अडिग और सच्ची होगी, आने वाली सहायता भी उतनी ही सशक्त और प्रभावकारी होगी।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. १७

तुम्हारे प्रति जो हमारे प्रभु के भौतिक आवरण रहे हो, तुम्हारे प्रति हम असीम कृतज्ञता प्रकट करते हैं। तुमने हमारे लिए इतना कुछ किया, हमारे लिए कर्म किया, संघर्ष किये, कष्ट झेले, आशा की, इतना सहन किया, तुमने हम सबके लिए संकल्प किये, सबके लिए प्रयत्न किये, तैयारी की, हमारे लिए सब कुछ प्राप्त किया, तुम्हारे सम्मुख हम नतमस्तक हैं और यह प्रार्थना करते हैं कि हम एक क्षण के लिए भी कभी तुम्हारे ऋण को न भूलें।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. ७

हमें प्रतीतियों से चकरा नहीं जाना चाहिये। श्रीअरविन्द ने हमें छोड़ा नहीं है। श्रीअरविन्द यहाँ हैं, शाश्वत काल तक जीवित और विद्यमान। अब यह हमारे ज़िम्मे है कि उनके कार्य को उसके लिए आवश्यक पूरी सच्चाई, उत्सुकता और एकाग्रता के साथ सम्पन्न करें।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. ७

शाश्वत जन्म

आज शाम को प्रश्नों का उत्तर देने के स्थान पर मैं चाहती हूँ कि हम श्रीअरविन्द की स्मृति में ध्यान करें, इस पर ध्यान करें कि उस स्मृति को अपने अन्दर जीवन्त कैसे बनाये रखा जाये और उस कृतज्ञता को भी, जो हमारे अन्दर उस सबके लिए होनी चाहिये जो उन्होंने किया और अब भी अपनी सदा ज्योतिर्मयी, सजीव और सक्रिय चेतना में इस महान् दिव्य चरितार्थता के लिए कर रहे हैं। वे पृथ्वी पर इस दिव्य चरितार्थता की केवल घोषणा करने ही नहीं, बल्कि उसे संसिद्ध करने भी आये थे और वे इसे संसिद्ध करने में लगे हुए हैं।

कल उनका जन्मदिन है, यह विश्व के इतिहास में एक शाश्वत जन्म है।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड ९, पृ. १९१

आपने श्रीअरविन्द के जन्म को विश्व-इतिहास में "शाश्वत" बतलाया है। "शाश्वत" का ठीक-ठीक अर्थ क्या है?

इसे चेतना के चार आरोही स्तरों पर चार भिन्न तरीक़ों से समझा जा सकता है :

१. भौतिक रूप में, जन्म के परिणाम जगत् के लिए शाश्वत महत्त्व के होंगे।

२. मानसिक रूप में, यह एक ऐसा जन्म है जिसे विश्व-इतिहास शाश्वत काल तक याद रखेगा।

३. चैत्य रूप से, एक ऐसा जन्म जो धरती पर युग-युग में हमेशा होता रहता है।

४. आध्यात्मिक रूप से, 'शाश्वत' का धरती पर जन्म।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. १०

यह प्रश्न उन शब्दों से सम्बन्धित है जो मैंने श्रीअरविन्द के जन्म के बारे में कहे थे—ये उनके जन्मदिन की पूर्व-सन्ध्या को कहे गये थे—मैंने उसका एक "सनातन जन्म" के रूप में वर्णन किया था। मुझसे पूछा गया है कि "सनातन" से मेरा क्या अभिप्राय है।

निस्सन्देह, यदि इन शब्दों को अक्षरशः लिया जाये तो एक "सनातन

जन्म" का कुछ विशेष अर्थ नहीं बनता। पर मैं तुम्हें अभी समझाऊँगी कि कैसे इसकी एक भौतिक व्याख्या या अर्थ, एक मानसिक अर्थ, एक चैत्य अर्थ और एक आध्यात्मिक अर्थ हो सकता है—और वास्तव में है भी।

भौतिक रूप में, इसका अर्थ यह है कि इस जन्म के परिणाम तब तक रहेंगे जब तक स्वयं पृथ्वी रहेगी। श्रीअरविन्द के जन्म के परिणाम पृथ्वी के सम्पूर्ण अस्तित्व-काल में अनुभव होते रहेंगे। अतः मैंने इसे कुछ कवित्वपूर्ण तरीक़े से "सनातन" कहा है।

मानसिक रूप में, यह एक ऐसा जन्म है जिसकी स्मृति सनातन काल तक बनी रहेगी।

आगे, युगों तक श्रीअरविन्द का जन्म और उसके प्रभाव स्मरण किये जायेंगे।

चैत्य रूप में, यह एक ऐसा जन्म है जिसकी पुनरावृत्ति विश्व के इतिहास में शाश्वत रूप से युग-युग तक होती रहेगी। यह एक ऐसा प्रादुर्भाव है जो पृथ्वी के इतिहास में, युग-युग में समय-समय पर होता है, अर्थात्, यह जन्म स्वयं अपने-आपको नये-नये रूपों में बार-बार दोहराता है और शायद प्रत्येक बार कुछ अधिक बड़ी चीज़—अधिक सिद्ध और अधिक पूर्ण चीज़—अपने साथ लाता है, परन्तु यह पार्थिव शरीर में अवतरित होने, अभिव्यक्त होने, जन्म लेने की वही क्रिया होती है।

और अन्त में, विशुद्ध आध्यात्मिक दृष्टि से, यह कहा जा सकता है कि यह जन्म पृथ्वी पर "सनातन" का जन्म है। क्योंकि प्रत्येक बार जब अवतार शरीर धारण करते हैं तो यह पृथ्वी पर स्वयं "सनातन" का जन्म होता है।

यह पूरी बात, दो शब्दों में आ गयी है : "सनातन जन्म"।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड ९, पृ. १९९-२००

अवतार

पृथ्वी के इतिहास में आरम्भ से ही श्रीअरविन्द ने किसी-न-किसी रूप में, किसी-न-किसी नाम से हमेशा पृथ्वी के महान् रूपान्तरों का सञ्चालन किया है। **'श्रीमातृवाणी'**, खण्ड १३, पृ. १०

श्रीअरविन्द ने अतिमानसिक चेतना को मानव शरीर में मूर्तिमन्त किया। उन्होंने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए जिस मार्ग का अनुसरण करना चाहिये

उसकी प्रकृति और उस पर चलने का न केवल तरीक़ा ही बताया बल्कि अपनी व्यक्तिगत उपलब्धि के द्वारा हमारे सामने उदाहरण भी रखा। उन्होंने हमारे सामने प्रमाण रखा कि यह किया जा सकता है और बताया कि उसे करने का समय भी अभी है।

*

क्षण-भर के लिए भी यह विश्वास करने में न हिचकिचाओ कि श्रीअरविन्द ने परिवर्तन के जिस महान् कार्य के लिए बीड़ा उठाया है उसकी पूर्णाहुति सफलता में ही होगी। क्योंकि यह वस्तुतः एक तथ्य है : हमने जो काम हाथ में लिया है उसके बारे में सन्देह की कोई छाया भी नहीं है...। रूपान्तर होगा ही होगा : कोई चीज़ उसे नहीं रोक सकती, सर्वशक्तिमान् के आदेश को कोई विफल नहीं कर सकता। समस्त शंकाशीलता और दुर्बलता को उठा फेंको और उस महान् दिवस के आने तक कुछ समय वीरता के साथ सहन करने का निश्चय करो, यह लम्बा युद्ध चिर विजय में बदल जायेगा। **'श्रीमातृवाणी'**, खण्ड १३, पृ. २२

सम्भवन की शाश्वतता में प्रत्येक अवतार केवल एक अधिक पूर्ण सिद्धि का उद्घोषक और अग्रदूत होता है।

फिर भी लोगों में हमेशा यह वृत्ति रहती है कि भविष्य के अवतारों के विरोध में भूतकाल के अवतार की पूजा करें।

अब फिर से श्रीअरविन्द जगत् के सामने आगामी कल की उपलब्धि की घोषणा करने आये हैं; और फिर से उनके सन्देश का उसी तरह विरोध हो रहा है जैसा उनसे पहले आने वालों का हुआ था।

लेकिन आगामी कल उनके द्वारा प्रकाश में लाये गये सत्य को प्रमाणित करेगा और उनका कार्य पूरा होगा।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. २३

जब एक बार अतिमानसिक चेतना दृढ़तापूर्वक स्थापित हो जायेगी तो क्या तब भी अवतारों को पृथ्वी पर जन्म लेने की आवश्यकता पड़ेगी?

इस प्रश्न का उत्तर देना तब अधिक सरल होगा जब अतिमानस सजीव

सत्ताओं के द्वारा पृथ्वी पर अभिव्यक्त होगा।

मैंने सदा लोगों को यह कहते सुना है कि श्रीअरविन्द "अन्तिम अवतार" थे; किन्तु शायद वे मनुष्य-शरीर में अन्तिम अवतार हैं—बाद की बात किसी को नहीं पता।... **'श्रीमातृवाणी'**, खण्ड १०, पृ. २९४

श्रीअरविन्द की जन्म-शताब्दी के लिए सन्देश

(आकाशवाणी, पॉण्डिचेरी से प्रसारित सन्देश)

आज श्रीअरविन्द के शताब्दी-वर्ष का पहला दिन है। यद्यपि उन्होंने अपना शरीर त्याग दिया है, फिर भी वे हमारे साथ हैं—जीवित और सक्रिय।

श्रीअरविन्द भविष्य के हैं; वे भविष्य के सन्देशवाहक हैं। वे अब भी हमें 'भागवत संकल्प' द्वारा निर्मित उज्ज्वल भविष्य को जल्दी चरितार्थ करने के लिए जिस राह का अनुसरण करना चाहिये वह दिखलाते हैं।

जो मानवजाति की प्रगति और भारत की ज्योतिर्मयी नियति के लिए सहयोग देना चाहते हैं, उन सबको भविष्यदर्शी अभीप्सा और प्रबुद्ध कार्य के लिए मिल कर काम करना चाहिये।

जिन लोगों का माताजी और श्रीअरविन्द के साथ सम्बन्ध है वे श्रीअरविन्द की जन्म-शताब्दी को अच्छी-से-अच्छी तरह कैसे मना सकते हैं?

अभीप्सा करो और अपने प्रयास में सच्चे और आग्रही बनो।

सामान्य लोग श्रीअरविन्द की जन्म-शताब्दी को अच्छी-से-अच्छी तरह कैसे मना सकते हैं?

समझदारी और मेल-मिलाप में प्रगति करने का प्रयास करके।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. १४

उनकी शताब्दी के अवसर पर हम श्रीअरविन्द को सर्वोत्तम श्रद्धाञ्जलि यही दे सकते हैं कि हमारे अन्दर प्रगति के लिए प्यास हो और हम अपनी सारी सत्ता को उस 'भागवत प्रभाव' के प्रति खोल दें जिसके श्रीअरविन्द पृथ्वी पर 'सन्देशवाहक' हैं। **'श्रीमातृवाणी'**, खण्ड १३, पृ. २०-२१

श्रीअरविन्द की चेतना के प्रति खुलो और उसे अपने जीवन को रूपान्तरित करने दो।

*

श्रीअरविन्द हमेशा उपस्थित हैं।

सच्चे, निष्कपट और निष्ठावान् बनो।

यह पहली शर्त है।

आशीर्वाद।

*

("श्रीअरविन्द और मानव एकता" पर ५ से ९ दिसम्बर १९७२ तक दिल्ली में हुए अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनार के लिए दिया गया सन्देश)

हम अतिमानसिक जाति के आगमन की तैयारी करके ही श्रीअरविन्द को सर्वोत्तम श्रद्धाञ्जलि अर्पित कर सकते हैं।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. १५

श्रीअरविन्द का सन्देश

श्रीअरविन्द जगत् को उस भविष्य के सौन्दर्य के बारे में बतलाने आये थे जिसे चरितार्थ होना ही है।

वे उस भव्यता की आशा नहीं, निश्चिति देने आये थे जिसकी ओर जगत् बढ़ रहा है। जगत् एक दुर्भाग्यपूर्ण दुर्घटना नहीं है, यह एक ऐसा अचम्भा है जो अपनी अभिव्यक्ति की ओर गति कर रहा है।

जगत् को भविष्य के सौन्दर्य की निश्चिति की ज़रूरत है। और श्रीअरविन्द ने यह आश्वासन दिया है।

*

श्रीअरविन्द किसी एक देश के नहीं, सारी पृथ्वी के हैं। उनकी शिक्षा हमें ज़्यादा अच्छे भविष्य की ओर ले जाती है।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. १५, १७

श्रीअरविन्द धरती पर अतिमानसिक जगत् की अभिव्यक्ति की घोषणा करने आये थे और उन्होंने इस अभिव्यक्ति की घोषणा ही नहीं की बल्कि अंशतः अतिमानसिक शक्ति को मूर्त रूप भी दिया और अपने उदाहरण से दिखलाया कि उसे अभिव्यक्त करने के लिए हमें कैसे तैयारी करनी चाहिये।

हम सर्वोत्तम चीज़ यही कर सकते हैं कि उन्होंने जो कुछ बतलाया है उसका अध्ययन करें और उनके उदाहरण का अनुसरण करने की कोशिश करें और अपने-आपको नयी अभिव्यक्ति के लिए तैयार करें।

यह चीज़ जीवन को उसका असली अर्थ प्रदान करती है और हमें सभी बाधाओं पर विजय पाने में सहायता देगी।

आओ, हम नूतन सृष्टि के लिए जियें और हम युवा एवं प्रगतिशील रहते हुए अधिकाधिक बलवान् बनेंगे।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. १८

श्रीअरविन्द हमें यह बताने आये थे कि 'तुझे' किस तरह पायें और किस तरह 'तेरी' सेवा करें।

वर दे कि उनके इस शताब्दी-वर्ष में हम उनकी शिक्षा को सचमुच समझ सकें और पूरी सच्चाई के साथ उसे कार्यान्वित करें।

*

लाल कमल श्रीअरविन्द का फूल है, लेकिन उनकी शताब्दी के लिए हम विशेष रूप से नील कमल को चुनेंगे जो उनके भौतिक प्रभामण्डल का रंग है, जो धरती पर परम पुरुष की अभिव्यक्ति की शताब्दी का प्रतीक होगा।

*

श्रीअरविन्द ने अपना जीवन दे दिया ताकि हम 'भागवत चेतना' में जन्म ले सकें।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. १६

श्रीअरविन्द को कौन समझ सकता है? वे समस्त विश्व के जैसे विशाल हैं और उनकी शिक्षा अनन्त है...

उनके ज़रा समीप आने का एकमात्र उपाय है उनसे पूरी सच्चाई के साथ प्रेम करना और अपने-आपको बिना संकोच के उनके कार्यों के प्रति समर्पित कर देना। इस तरह, हर एक अपना अच्छे-से-अच्छा प्रयास करता है और श्रीअरविन्द ने संसार के जिस रूपान्तर की भविष्यवाणी की है उसके लिए अपनी ओर से भरसक सहयोग देता है।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १२, पृ. ४३२

१९७२
नया वर्ष शुभ हो

यह वर्ष श्रीअरविन्द को निवेदित है।

श्रीअरविन्द धरती पर जो प्रकाश, ज्ञान और शक्ति इतनी उदारता के साथ लेकर आये हैं उस सबके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकाशित करने के लिए सबसे अच्छा उपाय है कि हम उनकी शिक्षा को अच्छी तरह समझने और उसे कार्यान्वित करने की कोशिश करें।

उनकी शिक्षा हमें प्रकाश दे और हमारा मार्ग-दर्शन करे, आज हम जिस चीज को नहीं कर पाते, उसे निश्चय ही कल कर लेंगे।

आओ, हम पूरी सच्चाई और निष्कपटता के साथ उचित मनोभाव अपनायें, तब यह सचमुच **शुभ वर्ष** होगा।

*

भगवान् के बिना हम सीमित, अक्षम और असहाय प्राणी हैं; भगवान् के साथ यदि हम अपने-आपको पूरी तरह उन्हें समर्पित कर सकें, तो सब कुछ सम्भव है और हमारी प्रगति असीम होगी।

श्रीअरविन्द के शताब्दी-वर्ष के लिए एक विशेष सहायता धरती पर आयी है; आओ, अहंकार पर विजय प्राप्त करने और प्रकाश में उभर आने के लिए हम इसका लाभ उठायें।

*

जब श्रीअरविन्द ने अपना शरीर त्यागा तो उन्होंने कहा था कि वे हमें छोड़ न देंगे। और, सचमुच इन इक्कीस वर्षों के दौरान, वे हमेशा हमारे साथ रहे हैं और जो उनके प्रभाव के प्रति ग्रहणशील और खुले हुए हैं उन्हें रास्ता दिखाते और उनकी सहायता करते रहे हैं।

उनके इस शताब्दी-वर्ष में उनकी सहायता और भी सशक्त होगी। यह हम पर निर्भर है कि हम और अधिक खुलें और जानें कि इससे लाभ कैसे उठाना है। भविष्य उनके लिए है जिनमें एक वीर की अन्तरात्मा है। हमारी श्रद्धा जितनी अधिक अडिग और सच्ची होगी, आने वाली सहायता भी उतनी ही सशक्त और प्रभावकारी होगी।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. १६-१७

(आश्रम के शारीरिक शिक्षण विभाग की १९७२ की प्रतियोगिता के लिए सन्देश)

आओ, इस वर्ष, हम अपनी शरीर-सम्बन्धी समस्त गतिविधियाँ श्रीअरविन्द को निवेदित और समर्पित कर दें।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. १८

(दर्शन-सन्देश)

श्रीअरविन्द का सन्देश भविष्य पर विकीरित होता हुआ अमर सूर्यालोक है।

*

श्रीअरविन्द परम पुरुष के यहाँ से धरती पर एक नयी जाति और एक नये जगत् की अभिव्यक्ति की घोषणा करने आये थे, और वह है: अतिमानसिक।

आओ, हम पूरी सच्चाई और लगन के साथ उसके लिए तैयारी करें।

*

मनुष्य बीते कल की सृष्टि है।

श्रीअरविन्द घोषणा करने आये थे आगामी कल की सृष्टि की: अतिमानसिक सत्ता के आगमन की।

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. २०

हमें श्रीअरविन्द के जन्मदिन पर कैसा मनोभाव रखना चाहिये?

निष्कपट तथा प्रगतिशील।

श्रीमाँ

मैं सिर्फ श्रीअरविन्द की शक्ति हूँ, तथा अपने सभी बच्चों की माता।

मेरे बच्चे मेरी चेतना के और मेरी सत्ता के **समान** रूप से अंश हैं। जब वे रूपान्तरित तथा सिद्ध हो जायेंगे तब सबको मेरे तथा श्रीअरविन्द के प्रत्येक पक्ष को अभिव्यक्त करने का समान अधिकार होगा।

एक सर्वनिष्ठ अभिव्यक्ति की एकजुटता में सबकी एकता ही धरती पर

नवीन तथा दिव्य विश्व के सृजन को स्वीकार करेगी। प्रत्येक अपना अंश लायेगा, किन्तु कोई अंश तब तक पूर्ण न होगा जब तक वह समस्त की एकजुटता में एक शक्ति न बन जाये।

CWSA खण्ड ३२, पृ. ८४

(माताजी ने लाल कमल को श्रीअरविन्द का पुष्प और श्वेत कमल को अपना पुष्प बतलाया था।)

लाल कमल—धरती पर परम प्रभु की अभिव्यक्ति का प्रतीक।

श्वेत कमल—'भागवत चेतना' का प्रतीक।

*

हमारा 'प्रेम' शाश्वत 'सत्य' है।

*

उनके बिना, मेरा अस्तित्व नहीं है।
मेरे बिना, वे अनभिव्यक्त हैं।

*

जब तुम अपने हृदय और विचार में मेरे और श्रीअरविन्द के बीच कोई भेद न करोगे, जब अनिवार्य रूप से श्रीअरविन्द के बारे में सोचना मेरे बारे में सोचना हो और मेरे बारे में सोचने का अर्थ हो श्रीअरविन्द के बारे में सोचना, जब एक को देखने का अनिवार्य अर्थ हो दूसरे को **उसी एक और अभिन्न व्यक्ति** के रूप में देखना—तब तुम यह जान लोगे कि तुम अतिमानसिक शक्ति और चेतना के प्रति खुलना शुरू कर रहे हो।

माँश्रीअरविन्द शरणं मम।

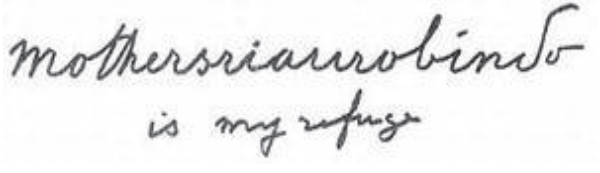

'श्रीमातृवाणी', खण्ड १३, पृ. ३३-३४

दो जो एक ही हैं

एकमेव चेतना

श्रीमाँ की चेतना और मेरी चेतना के बीच का विरोध पुराने दिनों का आविष्कार था (जिसका कारण मुख्यतया 'क्ष', 'त्र' तथा उस समय के अन्य व्यक्ति थे)। यह विरोध उस समय पैदा हुआ जब आरम्भ में यहाँ रहने वाले लोगों में से कुछ श्रीमाँ को पूर्ण रूप से नहीं पहचानते थे या उन्हें स्वीकार नहीं करते थे। और फिर उन्हें पहचान लेने के बाद भी वे इस निरर्थक विरोध पर अड़े रहे और उन्होंने अपने-आपको और दूसरों को बड़ी हानि पहुँचायी। श्रीमाँ की और मेरी चेतना एक ही है, एक ही भागवत चेतना दोनों में है, क्योंकि लीला के लिए यह आवश्यक है। श्रीमाँ के ज्ञान और उनकी शक्ति के बिना, उनकी चेतना के बिना कुछ भी नहीं किया जा सकता। यदि कोई व्यक्ति सचमुच उनकी चेतना को अनुभव करता है तो उसे जानना चाहिये कि उसके पीछे मैं उपस्थित हूँ, और यदि वह मुझे अनुभव करता है तो वैसे ही श्रीमाँ भी मेरे पीछे उपस्थित होती हैं। यदि इस प्रकार भेद किया जाये (उन लोगों के मन इन चीज़ों को इतने प्रबल रूप में जो आकार दे देते हैं उन्हें तो मैं एक ओर ही छोड़े देता हूँ), तो भला सत्य अपने-आपको कैसे स्थापित कर सकता है—सत्य की दृष्टि से ऐसा कोई भेद नहीं है।

CWSA खण्ड ३२, पृ. ७९

पिछले जन्मों का सम्बन्ध

हमने कौन-सा पुण्य किया था कि भागवत 'कृपा' ने हमें यह विरल सौभाग्य प्रदान किया कि यहाँ हम भगवान् के चरण-कमलों में पहुँच गये?

यह तुम्हारी अन्तरात्मा की पुकार थी जो तुम्हें यहाँ ले आयी और साथ ही यह तुम्हारे पिछले जन्मों की अभीप्सा रही होगी या फिर श्रीमाँ तथा मेरे साथ का कोई सम्बन्ध रहा होगा।

मेरे पिछले जन्मों की कौन-सी भक्ति मुझे श्रीमाँ के चरणों में ले आयी?

प्रभु के साथ ऐक्य की अभीप्सा और सम्भवतः यह भी कि प्रभु का धरती पर अवतरण हो।

भगवान् के दर्शन पाने के लिए लोग हर तरह के प्रयास करते हैं; कई रोते हैं, विलाप करते रहते हैं, लेकिन फिर भी वे उन्हें पाने में सफल नहीं होते। हम आश्रमवासियों के बारे में तो ऐसा नहीं लगता कि हमने बहुत कुछ किया है, फिर भी हम यहाँ आपके साथ हैं, आपके पास हैं। यह कैसे हुआ?

बहुत सारी चीज़ें हैं जो तुम्हें यहाँ ले आयीं—श्रीमाँ तथा मेरे साथ तुम्हारे पिछले जन्मों का सम्बन्ध, पिछले जन्मों में तुम्हारी प्रकृति के विकास के द्वारा यह सम्भव हुआ कि इस जन्म में तुम प्रभु की खोज में लीन हो गये—उन जन्मों की भक्ति ने इस जीवन में तुम्हें फल प्रदान किया—यानी, अन्ततः, तुम्हें 'भागवत कृपा' प्राप्त हो गयी।

क्रमविकास को आगे बढ़ाना

कहा जाता है कि आप और श्रीमाँ सृष्टि के प्रारम्भ से ही इस धरती पर विद्यमान हैं। लेकिन लाखों-करोड़ों वर्षों से आप छद्मवेश में क्यों रह रहे हैं? मैं "छद्मवेश" कह रहा हूँ क्योंकि अब, वर्तमान में ही आप जगत् के सम्मुख अपने सच्चे रूप में प्रकट हुए हैं।

हम क्रमविकास को आगे ही आगे बढ़ाये चले जा रहे हैं।

"क्रमविकास को आगे ही आगे बढ़ाये चले जा रहे हैं" वाक्यांश मेरी समझ में नहीं आया। कृपया इसका खुलासा करेंगे?

इसका अर्थ होगा, मानवजाति का समस्त इतिहास लिखना। मैं बस इतना

ही कह सकता हूँ कि चूँकि क्रमविकास को अगले स्तर पर उठाने के लिए विशेष अवतरण होते हैं, उसी तरह क्रमविकास के हर स्तर पर धरती को दिशा देने के लिए भगवान् की कोई वस्तु हमेशा उपस्थित रहती है।
CWSA खण्ड ३२, पृ. ८७-८८

चूँकि आप तथा श्रीमाँ सृष्टि के एकदम प्रारम्भ से ही यहाँ हैं तो एक के बाद एक अवतार के यहाँ उतरने की क्या आवश्यकता थी?

धरती पर हम अवतार के रूप में नहीं थे।

आप कहते हैं कि आप दोनों अवतार की भाँति नहीं थे, फिर भी आप क्रमविकास को आगे बढ़ा रहे थे। 'स्वयं' प्रभु पृथिवी पर क्रमविकास को आगे लिये चले जा रहे थे तब फिर अवतारों के उतरने की क्या आवश्यकता थी, जो उन्हीं के अंश थे?

जब कोई विशेष कार्य करना होता है तब अवतार की आवश्यकता होती है। अवतार विशेष अभिव्यक्ति होते हैं जब कि बाक़ी समय सामान्य मनुष्य के अन्दर विभूति के रूप में भगवान् ही कार्य करते हैं।
CWSA खण्ड ३२, पृ. ९१

गुरु, भगवान् तथा सत्य

हमारे योग में गुरु, भगवान् तथा सत्य में सचमुच कोई अन्तर है क्या? मैं तो यही मानता रहा हूँ कि श्रीमाँ तथा आप न केवल गुरु हैं बल्कि भगवान् भी हैं, और यह कि आप दोनों जो कुछ भी कहते हैं वह 'सत्य' का विधान होता है। तब हम इन तीन अलग-अलग शब्दों का क्यों प्रयोग करते हैं?

मैंने आध्यात्मिक जीवन तथा आज्ञा-पालन के व्यापक नियम के बारे में लिखा था। तुम्हें इसे यहाँ विशेष रूप से प्रयोग में भी लाना जानना चाहिये। इसके अलावा यहाँ कई बस यह कह कर सन्तुष्ट हो जाते हैं कि, "श्रीमाँ

भगवान् हैं," लेकिन वे उनकी आज्ञा का पालन नहीं करते। दूसरे सचमुच उन्हें भगवान् नहीं समझते—वे उनके साथ सामान्य गुरु की तरह व्यवहार करते हैं।

CWSA खण्ड ३२, पृ. ९१

पथ-प्रदर्शकों की कठिनाइयाँ

निश्चित ही, अगर हम शुरू से ही भौतिक रूप से अतिमानस में रहते तो कोई भी हमारे समीप नहीं आ पाता, न कोई साधना ही हो पाती। हमारे तथा पृथ्वी और मानव के बीच सम्पर्क की कोई आशा ही नहीं रहती। अब वर्तमान में भी, हमेशा अपनी उच्च चेतना में बने रहने की बजाय श्रीमाँ को साधकों की निम्न चेतना में उतरना पड़ा, वरना वे कहना शुरू कर देते, "कितनी दूर थीं आप, कितनी कठोर थीं आप; आप मुझसे प्रेम नहीं करतीं, मुझे आपसे कोई सहायता नहीं मिलती, वग़ैरह, वग़ैरह।" मानव से मिलने के लिए भगवान् को अपने-आपको घूँघट में रखना होता है।

CWSA खण्ड ३२, पृ. ९३

तुम कहते हो कि तुम्हारे लिए यह पथ बहुत कठिन है या तुम्हारी प्रकृति के अनुकूल नहीं है, साथ ही तुम्हारा यह कहना भी है कि मेरे या माताजी के जैसे "अवतार" ही यह कर सकते हैं। यह बड़ी अजीब सी भ्रान्त धारणा है; क्योंकि, इसके विपरीत, यह पथ सबसे सरल, सबसे सहज और सबसे ऋजु पथ है, और कोई भी व्यक्ति—अगर वह अपने मन और अपने प्राण को शान्त कर ले—इसका अनुसरण कर सकता है, यहाँ तक कि वे भी जिनके अन्दर तुमसे दसगुनी कम क्षमता है, इसे कर सकते हैं। तनाव, दबाव और घोर परिश्रम का दूसरा पथ सचमुच कठिन होता है और उसमें तपस्या की महान् शक्ति की आवश्यकता होती है। रही बात माताजी और मेरी, तो हमें सभी पथों को आज़माना पड़ा, सभी प्रक्रियाओं का अनुसरण करना पड़ा, कठिनाइयों के पहाड़ों को लाँघना पड़ा, तुमसे या आश्रम अथवा बाहर के किसी भी व्यक्ति से कहीं ज़्यादा भारी बोझ कठिनतम परिस्थितियों में ढोना पड़ा, घाव सहने पड़े, अगम्य दलदलों, तपते रेगिस्तानों और बीहड़ जंगलों से रास्ता निकालना पड़ा, विरोधी शक्तियों की

राशि पर विजय पानी पड़ी, मैं निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि हमें ऐसे-ऐसे कार्य करने पड़े जैसे हमसे पहले किसी को नहीं करने पड़े। क्योंकि हमारे जैसे कार्य में पथ-प्रदर्शक को न केवल भगवान् को नीचे लाना, उनका प्रतिनिधित्व करना, उन्हें मूर्त रूप देना होता है, बल्कि मानवता के अभीप्सा करने वाले, यानी आरोहणकारी तत्त्व का भी प्रतिनिधित्व करना होता है, मानवता के बोझ को पूरी तरह से अनुभव करना होता है, मात्र लीला के तौर पर नहीं बल्कि कठोर गाम्भीर्य के साथ जीवन की सभी बाधाओं, मुसीबतों, अड़ंगों का सामना करना होता है, केवल तभी घोर परिश्रम के साथ पथ पर चलना सम्भव होता है। लेकिन न यह आवश्यक है न सह्य कि हम हमसे पहले आये लोगों की सम्पूर्ण अनुभूति को पहले दोहरायें। चूँकि सम्पूर्ण अनुभूति प्राप्त है इसलिए हम औरों को ऋजु तथा सरल पथ दरशा सकते हैं—अगर वे इसे अपनाना चाहें तो अपनायें। चूँकि हमने यह अनुभूति बहुत मूल्य देकर पायी है कि हम तुम्हें और दूसरों को प्रेरित कर बलपूर्वक कह सकते हैं कि "चैत्य मनोभाव अपनाओ; ऋजु तथा सूर्यालोकित पथ पकड़ो—भगवान् प्रकट या गुप्त रूप से तुम्हें सहारा दे रहे हैं—अगर गुप्त रूप से भी दे रहे हों तो उचित समय पर वे स्वयं को तुम्हारे सम्मुख प्रकट करेंगे—कठोर, बाधायुक्त, चक्करदार और कठिन पथ अपनाने का आग्रह मत करो।

CWSA खण्ड ३२, पृ. ९४-९५ **श्रीअरविन्द**

प्रकाश तथा आह्वान के प्रति श्रद्धा

जब मैंने अन्तरात्मा के प्रकाश और भागवत पुकार के प्रति निष्ठावान् बने रहने की बात की थी... तो मैं सभी संकटों और प्रहारों के दौरान इसकी महान् आवश्यकता के बारे में सुझाव दे रहा था—यानी, तुम्हें ऐसे सभी सुझावों, आवेशों, आकर्षणों पर कान देने से एकदम इन्कार कर देना चाहिये जो 'सत्य' की पुकार का, 'प्रकाश' के अनिवार्य संकेत का विरोध करें। सभी सन्देहों और निराशा के समय तुम्हें यह कहना चाहिये, "मैं भगवान् का हूँ, मैं असफल नहीं हो सकता"; अपवित्रता और अनुपयुक्तता के सभी विचारों को यह उत्तर देना चाहिये, "मैं श्रीअरविन्द तथा श्रीमाँ के द्वारा चुना हुआ शाश्वतता का बालक हूँ; मुझे बस अपने और उनके प्रति

सच्चा बनना है—विजय सुनिश्चित है; अगर मैं गिरा भी तो, निश्चय ही मैं फिर से उठ जाऊँगा"; उन सभी आवेगों को, जो किसी और आदर्श की सेवा करने के लिए मुड़ जायें, तुम्हें कहना चाहिये, "नहीं, वह नहीं, यही महानतम है, यही 'सत्य' है, केवल यही मेरी आन्तरिक आत्मा को सन्तुष्ट कर सकता है; भागवत यात्रा के अन्त तक मैं सभी अग्नि-परीक्षाओं और विपत्तियों को सहूँगा।" 'प्रकाश' और 'पुकार' के प्रति निष्ठावान् बने रहने का मेरा यही अर्थ था।

श्रीमाँ तथा श्रीअरविन्द के प्रति उद्‌घाटन

हम चाहें श्रीअरविन्द को लिखें या श्रीमाँ को, क्या यह एक ही बात है? कुछ लोग कहते हैं कि दोनों एक ही हैं, इसलिए चाहे हम श्रीअरविन्द को लिखें या माँ को, हम माँ की ओर ही खुले होते हैं। क्या यह ठीक है?

यह सत्य है कि हम दोनों एक ही हैं, पर सम्बन्ध का अस्तित्व भी है, जिसके कारण यह आवश्यक हो जाता है कि व्यक्ति श्रीमाँ की ओर खुला हो।

क्या यह हो सकता है कि एक व्यक्ति जो श्रीअरविन्द की ओर खुला है, माँ की ओर खुला न हो? क्या यह बात ठीक है कि जो कोई भी श्रीमाँ की ओर खुला हो, वह श्रीअरविन्द की ओर भी खुला है?

श्रीमाँ के बारे में कथन सही है। यदि कोई श्रीअरविन्द की ओर खुला है, लेकिन माताजी की ओर नहीं, तो उसका अर्थ यह है कि वास्तव में वह श्रीअरविन्द की ओर भी खुला हुआ नहीं है।

किसी ने मुझसे कहा: "जब मैं यहाँ आया था, श्रीअरविन्द योग के बारे में कभी हमें कुछ नहीं सिखाया करते थे। वे हमें हमारे अपने ज्ञान का अनुसरण करने को कहा करते थे।" क्या ऐसी ही बात थी?

मुझे इस बारे में कोई जानकारी नहीं है। लेकिन अब भी श्रीमाँ सिखाती

नहीं हैं, वे सभी से उद्घाटित होने और ग्रहण करने के लिए कहती हैं। लेकिन वे उन्हें बाक़ायदा शिक्षा नहीं देतीं और मुझे नहीं लगता कि मैंने कभी लोगों से उनके अपने "ज्ञान" का अनुसरण करने को कहा हो।
CWSA खण्ड ३२, पृ. १०४-०५

आश्रम में तथा बाहरी जीवन में साधना

श्रीअरविन्द तथा श्रीमाँ के प्रभाव को ग्रहण करने के लिए श्रद्धा के साथ-साथ आवश्यकता है बस आध्यात्मिक पथ का अनुसरण करने के लिए पूर्ण सच्चाई और प्रभाव के प्रति खुलने के लिए संकल्प तथा सामर्थ्य की; लेकिन सामान्यतः यह सामर्थ्य सच्चाई तथा श्रद्धा के परिणाम-स्वरूप आता है।

आश्रम के बाहर रह कर भी योग का अनुसरण करना पूरी तरह सम्भव है। उत्तर तथा दक्षिण भारत में, दोनों जगह, ऐसे बहुत हैं जो यह करते हैं।
CWSA खण्ड ३२, पृ. १०६

वैयक्तिक सम्पर्क होता है, लेकिन अधिकांशतः यह आन्तरिक निकटता होती है जिसमें भौतिक सम्पर्क बस उसे सहारा देने के लिए होता है। लेकिन दूर रह कर भी इस आन्तरिक सम्पर्क को भली-भाँति पाया जा सकता है। अमरीका में हमारे शिष्य नहीं है, हालाँकि हाल ही में कई अमरीकन यहाँ आये हैं और योग में रस लेने लगे हैं। लेकिन फ़्रांस में हमारे शिष्य हैं और उनमें से कुछ तो हमारे साथ आन्तरिक निकटता स्थापित करने में समर्थ भी हो गये हैं और अपने आध्यात्मिक प्रयास तथा अनुभव में हमारे सामीप्य और हमारी सहायता के बारे में भी अभिज्ञ हो गये हैं। इसलिए हम तुम्हें यही परामर्श देंगे कि इतनी लम्बी यात्रा की कठिनाइयाँ और असुविधाएँ उठा कर यहाँ आने की बजाय जहाँ तुम हो वहीं रह कर साधना करने की कोशिश करो, क्योंकि अगर आवश्यकता हुई तो जब तुम योग-पथ पर, अभी जहाँ हो उससे कुछ और आगे बढ़ जाओगे तब तुम्हारा यहाँ आकर रहना और योग करना अधिक लाभदायक होगा।
CWSA खण्ड ३२, पृ. १०७

उनकी करुणा तथा प्रेम

तुम्हें यह नहीं सोचना चाहिये कि कोई भी चीज़ तुम्हारे प्रति हमारे मनोभावों को बदल सकती है। वह जो तुम्हें खुल कर दिया जा रहा है, प्राणिक मानव प्रेम नहीं है जिसमें बाहरी चीज़ों से उतार-चढ़ाव आते हैं: तुम्हारे प्रति हमारा मनोभाव हमेशा समान और दृढ़ रहता है, हम तुम्हारी सहायता कर रहे हैं, तुम्हें ऊपर उठा कर उस 'प्रकाश' की ओर ले जाने का प्रयत्न कर रहे हैं जहाँ अपनी अन्तरात्मा और अपने हृदय के मिलाप से तुम 'सखा' तथा 'माँ' को पहचान लोगे।

CWSA खण्ड ३२, पृ. १०१

जब ये 'मूड' या यह कहें कि सनकें तुम पर छा जाती हैं तब तुम श्रीमाँ से दूर क्यों भागते हो, उनसे बचते क्यों हो? तुम उनके पास क्यों नहीं आते, सीधा-सीधा उनसे अपने मन की बात क्यों नहीं करते और तुम्हारी परेशानी उन्हें क्यों नहीं लेने देते?

हमें छोड़ने के तुम्हारे किसी भी कारण में कोई दम नहीं है। अगर तुम प्रभु की समृद्धि तथा महानता देखना चाहते हो तो तुम देखोगे, अगर तुम प्रतीक्षा करो तो बाहर की अपेक्षा यहाँ हमारे साथ रह कर कहीं अधिक देख सकोगे। और अगर तुम हिमालय देखना चाहते हो तो तुम्हारे लिए कहीं ज़्यादा अच्छा होगा कि अब से अपनी श्रीमाँ के निकट बैठ कर हिमालय-दर्शन करो।

तुम्हारा यह कहना सरासर ग़लत है कि अगर तुम यहाँ से चले जाओ तो आश्रम में कोई शैतान नहीं बचा रहेगा। तुम्हारे कारण शैतान यहाँ नहीं है, वह यहाँ इसलिए है क्योंकि वह माँ को तंग करना और उनका काम बिगाड़ना चाहता है। और मुख्य रूप से वह उनके बच्चों को उनसे दूर हटा देना चाहता है, विशेषकर उनको जो उनके निकटतम रहना चाहते हैं। तुम चले जाओगे, वह बना रहेगा; और न केवल वह बना रहेगा बल्कि अनुभव करेगा कि उसने बहुत बड़ी विजय पा ली है और दूसरों के ज़रिये दुगुने वेग और शक्ति के साथ उन पर प्रहार करने के लिए आगे कूच करेगा।

तुम कहते हो कि तुम श्रीमाँ तथा मुझे तकलीफ़ नहीं देना चाहते; लेकिन तुम यह नहीं समझ पा रहे हो कि तुम्हारे यहाँ से चले जाने से बढ़

कर हमारे लिए दूसरा कोई कष्ट न होगा। विद्रोह के ये जो 'मूड' तुम पर छा जाते हैं ये गुज़रते हुए बादल हैं; लेकिन, इस तरह तुम्हारा हमें छोड़ कर चले जाना, हमें अपने प्रेम का इस तरह तिरस्कार होते देखना और हमारे निकट तुम्हारे स्थान को यूँ ख़ाली देखना हमारे लिए सचमुच बड़ी परेशानी की बात होगी और तुम्हारे यहाँ से चले जाने से बड़ा दुःख तुम हमें नहीं दे सकते।

तुम जानते ही हो कि तुम्हारी इच्छा यहाँ से चले जाने की बिलकुल नहीं है। यह केवल तभी भड़कती है जब तुम ऐसी मनोदशा में होते हो। और तुम यह भी जानते हो कि ये गुज़रती हुई मनोदशाएँ हैं, और अगर तुम माँ को इन्हें खदेड़ देने की अनुमति दे दो तो ये तुरन्त चली जायेंगी। परेशानी यह है कि जब ये आती हैं तो तुम इन्हें अपने हृदय से इतना चिपका लेते हो कि बस यही सोचना शुरू कर देते हो कि अब यहाँ से चले जाने के सिवाय मेरे पास और कोई चारा नहीं है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि यह कोई समाधान नहीं है और यह भी कि तुमसे अलग होने की जगह, तुम्हारी इस मनोदशा के साथ भी हम तुम्हें हमेशा अपने साथ रखना चाहेंगे; तुम्हारे लिए हमारे प्रेम की तुलना में तुम्हारे ये तथाकथित "मूड" हमें जो क्लेश देते हैं वह मात्र तराज़ू पर पड़ी धूल के समान है। CWSA खण्ड ३२, पृ. १०२-०३

आवश्यक प्रयास

साधक से जिस प्रयास की माँग की जाती है वह है अभीप्सा, त्याग और आत्म-समर्पण। अगर ये तीनों चीज़ें की जायें तो फिर बाक़ी चीज़ें श्रीमाँ की कृपा से और तुम्हारे अन्दर उनकी शक्ति की क्रिया के कारण अपने-आप ही आयेंगी। परन्तु इन तीनों में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है आत्म-समर्पण, और उसका प्रथम आवश्यक स्वरूप है कठिनाई के समय विश्वास, भरोसा और धैर्य। यह कोई नियम नहीं है कि विश्वास और भरोसा केवल तभी रह सकते हैं जब कि अभीप्सा भी हो। बल्कि इसके विपरीत, जब तामसिकता के दबाव के कारण अभीप्सा नहीं होती तब भी विश्वास, भरोसा और धैर्य विद्यमान रह सकते हैं। यदि अभीप्सा के प्रसुप्त रहने पर विश्वास और धैर्य साथ छोड़ दें तो इसका मतलब यह होगा कि

साधक एकमात्र अपने निजी प्रयास पर ही निर्भर करता है—उसका अर्थ होगा—"ओह, मेरी अभीप्सा असफल हो गयी है, इसलिए अब मेरे लिए कोई आशा नहीं। मेरी अभीप्सा असफल हो रही है, इसलिए भला माताजी भी क्या कर सकती हैं?" पर, इसके विपरीत, साधक का भाव यह होना चाहिये—"कोई बात नहीं, मेरी अभीप्सा फिर से वापस आयेगी। इस बीच, मैं जानता हूँ कि जब मैं श्रीमाँ को अनुभव नहीं करता तब भी वे मेरे साथ हैं; वे मुझे अन्धकारमयी घड़ियों से भी पार करायेंगी।" यही पूर्णतः यथार्थ भाव है जिसे तुम्हें अवश्य बनाये रखना चाहिये। जिनमें यह भाव होता है, अवसाद उनका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता; अगर अवसाद आता भी है तो उसे किंकर्तव्यविमूढ़ होकर वापस लौट जाना पड़ता है। यह चीज़ तामसिक आत्म-समर्पण नहीं है। तामसिक समर्पण तो उसे कहते हैं जब मनुष्य कहता है कि "मैं कुछ भी नहीं करूँगा; श्रीमाँ सब कुछ कर दें। अभीप्सा, त्याग और आत्म-समर्पण भी आवश्यक नहीं हैं। माताजी ही मेरे अन्दर यह सब कर दें।" इन दोनों भावों में बहुत बड़ा अन्तर है।

एक भाव तो है उस पीछे हटने वाले का जो कुछ भी नहीं करना चाहता; और दूसरा है उस साधक का जो अपनी शक्ति-भर प्रयास करता है, पर जब वह कुछ समय के लिए अकर्मण्यता में जा गिरता है और चीज़ें विपरीत हो जाती हैं तब भी वह सब चीज़ों के पीछे विद्यमान श्रीमाँ की शक्ति और उपस्थिति में अपना विश्वास बनाये रखता है और उस विश्वास के द्वारा विरोधी शक्ति को चकमे में डाल देता है और साधना की क्रिया को फिर वापस ले आता है।

CWSA खण्ड ३२, पृ. १३९-४० **श्रीअरविन्द**

यह बात पूरी तरह से निश्चित है कि हम दिन-रात तुम्हारे साथ हैं, भले तुम अभी तक श्रीमाँ को अपने सपनों में न देखो या उनकी उपस्थिति का अनुभव न करो, तुम्हें हमेशा यह सोचना चाहिये कि वे वहाँ हैं और तुम्हें सहारा दे रही हैं, और यह चीज़ ज़रूर तुम्हारी मदद करेगी।

CWSA खण्ड ३२, पृ. १०५

'पुरोधा'

दैनन्दिनी

अप्रैल

१. ... स्वयं साधना के लिए ही हम साधना करना नहीं चाहते। हम तो यह चाहते हैं कि हम जो कुछ करें उस सबमें, सारे समय, अपने सभी कर्मों में और प्रत्येक मुहूर्त में भगवान् पर एकाग्र रहें।

२. ऐसा कोई भी नहीं है जिसके लिए भगवान् को पाना असम्भव हो। कुछ लोगों के लिए बहुत-बहुत जन्म लग जायेंगे जब कि ऐसे लोग भी हैं जो इसी जन्म में उन्हें पा लेंगे। यह संकल्प का प्रश्न है। चुनाव तुम्हें स्वयं करना होगा।

३. माताजी की सतत उपस्थिति अभ्यास से आती है। साधना में सफलता के लिए भागवत कृपा आवश्यक है, लेकिन भागवत कृपा के अवतरण के लिए अभ्यास ही तैयारी करता है।

४. केवल शान्त स्थिरता में ही सब कुछ जाना और किया जा सकता है। जो कुछ उत्तेजना और उग्रता में किया जाता है वह मतिभ्रंश और मूर्खता है। सत्ता में भागवत उपस्थिति का पहला चिह्न है शान्ति।

५. सभी वस्तुओं को मधुरता की ओर मोड़ दो; यही दिव्य जीवन का नियम है।

६. क्रोध और बदले की भावना निचली मानवता की वस्तुएँ हैं, ये बीते कल की मानवजाति की चीज़ें हैं, आने वाले कल की नहीं।

७. अगर चेतना के विकास को जीवन का मुख्य लक्ष्य मान लिया जाये, तो बहुत-सी कठिनाइयों का समाधान मिल जायेगा।

८. हमारा हर रोज़, हर समय का प्रयास यही हो कि हम तुझे ज़्यादा अच्छी तरह जान सकें, तेरी सेवा ज़्यादा अच्छी तरह कर सकें।

९. विश्वास रखो कि तुम जब कभी मुझे बुलाते हो, मैं सुनती हूँ और मेरी सहायता और मेरी शक्ति सीधी तुम्हारी ओर जाती हैं।

१०. ... वह जो भगवान् के पथ पर चलता है, अपने प्रयास को कभी ढीला नहीं होने देता—चाहे जितने लम्बे समय तक उसे प्रयास क्यों न जारी रखना पड़े।

११. आत्मा के साथ सम्पर्क और सत्ता के सत्य के विकास और उसकी अभिव्यक्ति की परम आवश्यकता पर ज़ोर दो।

१२. ऐसे बहुत कम हैं जो भगवान् पर अपनी श्रद्धा और अपने भरोसे की चट्टान पर दृढ़ता से खड़े रह सकते हैं।

१३. भक्ति कोई अनुभूति नहीं है। यह हृदय और अन्तरात्मा की एक अवस्था है। यह एक ऐसी अवस्था है जो तब आती है जब चैत्य सत्ता जाग्रत् और सुव्यक्त हो।

१४. प्रश्न : मैं केवल सुन्दर होना चाहता हूँ।
उत्तर: सच्चाई के साथ शारीरिक व्यायाम करो और तुम सफल हो जाओगे।

१५. यह कभी न मानो कि तुम जानते हो। हमेशा ज़्यादा अच्छी तरह जानने की कोशिश करो।

१६. अपने-आपको उस नये प्रकाश के प्रति खोलो जो धरती पर उदित हुआ है और तुम्हारे सामने एक ज्योतिर्मय पथ खुल जायेगा।

१७. वीर किसी चीज़ से नहीं डरता, किसी चीज़ की शिकायत नहीं करता और कभी हार नहीं मानता।

१८. अगर तुम्हें काम नापसन्द है, तो तुम जीवन में हमेशा दुःखी रहोगे।

१९. इसी जीवन में तुम एक ही बार, हमेशा के लिए अटल रूप में अपने लक्ष्य का चुनाव कर सकते हो।

२०. व्यक्ति में यह विश्वास होना चाहिये कि चाहे जितना उपलब्ध हो चुका हो, फिर भी उसके अन्दर इच्छा हो तो वह हमेशा ज़्यादा अच्छा कर सकता है।

२१. एक अच्छा शिक्षक बनने के लिए गुरु की सूक्ष्म दृष्टि और उनका ज्ञान होना चाहिये, और साथ ही सब कसौटियों के लिए धैर्य।

२२. हम यहाँ हैं ही कठिन काम करने के लिए। यदि हम वही दोहराते रहें जो दूसरे करते हैं तो इसकी सार्थकता ही क्या है; पहले ही दुनिया में बहुतेरे विद्यालय हैं।

२३. हमें अपनी सम्भावनाओं के प्रति सजग-सचेतन बना, अपनी कठिनाइयों के प्रति भी, ताकि हम निष्ठा के साथ तेरी सेवा करने के लिए उन पर विजय पा सकें।

२४. सच्ची बुद्धिमानी तो यह है कि जो कुछ करो ख़ुशी से करो, और यह सम्भव है यदि तुम जो कुछ करो उसे प्रगति का साधन बना लो।

२५. व्यक्ति को एकाग्र होना सीखना चाहिये और उसे सभी कार्य पूर्ण एकाग्रता के साथ करने चाहियें।

२६. सबके लिए सबसे अच्छा उपाय है, भगवान् के प्रति आत्म-निवेदन और उनकी अनन्त कृपा पर विश्वास।

२७. प्रश्न : योग में श्रद्धा की ऐसी अनिवार्य आवश्यकता क्यों है?
उत्तर : क्योंकि हम एक ऐसे लक्ष्य के लिए प्रयास कर रहे हैं जैसा पहले कभी नहीं चरितार्थ किया गया।

२८. सभी अहंकारमय हेतुओं से मुक्त, वाणी और क्रिया में सत्य के प्रति सावधान, स्वाग्रहरहित, स्वेच्छाचाररहित, सभी चीज़ों के बारे में चौकन्ना —यह है निर्दोष सेवक होने की शर्त।

२९. काम के लिए वर्तमान सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण चीज़ है। भूतकाल को रास्ते में न आना चाहिये और भविष्य को तुम्हें खींच न लेना चाहिये।

३०. परम प्रभु, हमें नीरव रहना सिखा ताकि नीरवता में हम तेरी शक्ति पा सकें और तेरी इच्छा को समझ सकें।
हमें सत्य की ओर अपने प्रयास में वास्तविक रूप से सच्चा होना सिखला।

'दिव्य शरीर में दिव्य जीवन'

सत्ता के स्तर और भाग

संसार को भारतीय संस्कृति का सबसे बड़ा एक योगदान है योग। हमारा समस्त वनस्पति-शास्त्र, रसायन, आयुर्वेद, सबका महत्त्व और उनका विकास उन ऋषियों का ऋणी है जो योगी थे। उन्हें यह सब अन्तर्भास द्वारा प्राप्त होता था। चरक संहिता से हमें पता लगता है कि जब ऋषि अस्वस्थ होने लगे तो वे भारद्वाज के पास सलाह लेने गये और भारद्वाज ने अन्तर्भास के स्वामी इन्द्र की सलाह माँगी और उनको जो कुछ उन्होंने बतलाया उसका आज भी चलन है। प्रायः सभी प्राचीन ग्रन्थों में हम देखेंगे

कि पार्वती प्रश्न करती हैं और शिव उत्तर देते हैं। इससे पता चलता है कि यह सारा ज्ञान एक उच्चतर चेतना से प्रकट हुआ था। हमारे पूर्वजों ने न केवल चेतना की इस उच्च अवस्था को प्राप्त किया बल्कि उन्होंने आन्तरिक स्तरों का भी वर्णन किया और यह भी बतलाया कि मानव व्यक्तित्व के साथ प्रत्येक स्तर का किस हद तक सम्बन्ध है। अपनी समस्त प्राप्तियों के बावजूद आधुनिक मनोविज्ञान और मनोविश्लेषण प्राचीन योग या मनोविज्ञान के दशांश तक भी नहीं पहुँच पाया है।

हम संक्षेप में प्राचीन मनोविज्ञान और श्रीअरविन्द के मनोविज्ञान को समझने की कोशिश करेंगे जिसमें ब्रह्माण्ड-विज्ञान भी आ जाता है। दिव्य चेतना ने अन्तर्लयन की प्रक्रिया द्वारा क्रमशः अनेक स्तर उत्पन्न किये और इस तरह सृष्टि उत्पन्न हुई।

मानव व्यक्तित्व बहुत-से व्यक्तित्वों का मिश्रण है। श्रीअरविन्द के योग का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है उन स्तरों को व्यक्तिगत रूप देना जो अभी तक व्यक्तिगत नहीं हो पाये हैं, ताकि एक नये मानव का निर्माण हो सके। अन्तर्भास के स्तर के व्यक्तीकरण से हम हमेशा अन्तर्भास और उससे परे की क्षमताओं से पथ-प्रदर्शन पा सकते हैं और मन तथा उसकी तर्क-शक्ति पर निर्भर नहीं रहते। और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है अतिमानसिक स्तर का व्यक्तीकरण जो माताजी और श्रीअरविन्द के अनुसार भौतिक रूपान्तर की ओर ले जाता है। इसका अर्थ यह है कि रक्त, मांस और हड्डियों के शरीर की जगह प्रकाश का शरीर होगा जो लचीला और अछेद्य तथा अभेद्य होगा; कोई उसे गोली मार दे तो भी कोई असर न होगा। तो इस नये शरीर का निर्माण माताजी और श्रीअरविन्द की दृष्टि का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है।

स्तरों का अपनी पूर्णता में अस्तित्व है, परन्तु यह बात केवल इस ब्रह्माण्ड यानी हमारे इस विश्व पर लागू होती है। अनेक ब्रह्माण्ड हैं, परन्तु अन्य ब्रह्माण्डों में विकास की क्या प्रक्रिया है यह हमें नहीं मालूम। विकास और अन्तर्लयन की प्रक्रिया तो केवल हमारे विश्व की चीज़ है। तो हमारे सामने स्वभावतः यह महत्त्वपूर्ण प्रश्न आता है कि जो स्तर अभी तक व्यक्तीकृत नहीं हुए हैं उन्हें कैसे व्यक्तीकृत किया जाये। अमुक स्तर तक माताजी, श्रीअरविन्द तथा अन्य योगियों द्वारा बताये गये स्तरों में कुछ समानता है।

अलग-अलग स्तरों पर देश और काल की गणना अलग-अलग है इसीलिये ब्रह्मा के दिन और रात की बात की जाती है कि उनका दिन ऐसा और रात ऐसी होती है। यह हमारे पूर्वजों की भूल नहीं थी, पर हो सकता है कि गणना बढ़ा-चढ़ा कर कर दी गयी हो, या न भी की गयी हो, हम आज इसको किसी भी चीज़ से माप नहीं सकते, परन्तु मैं व्यक्तिगत रूप से यह मानता हूँ कि चीज़ें बढ़ा-चढ़ा कर नहीं कही गयी हैं क्योंकि हमारे पूर्वजों को सत्य-चेतना प्राप्त थी। हाँ, समझने और अर्थ लगाने में भेद हो सकता है।

प्राचीन भारतीय पद्धति के अनुसार ३६ तत्त्व हैं, कभी-कभी उन्हें २४ कहा जाता है। इन ३६ और २४ तत्त्वों में बहुत कम भेद है क्योंकि उनमें काफ़ी सारे समान हैं—५ ज्ञानेन्द्रियाँ, ५ कर्मेन्द्रियाँ और ५ तन्मात्राएँ। २४ तत्त्वों में मानस, बुद्धि, अहंकार और चित्त इत्यादि की भी गिनती है। ३६ तत्त्वों में बारह आन्तरिक स्तर भी हैं। श्रीअरविन्द के और प्राचीन ऋषियों के दिये नामों में फ़र्क है, परन्तु इस मौलिक विचार में कि हर चीज़ का मूल भगवान् हैं और सृष्टि अन्तर्लयन की प्रक्रिया द्वारा प्रकट हुई है, बहुत समानता है। कुण्डलिनी, चक्र और स्तरों के वर्णन में बहुत कम भेद हैं। वहाँ बारह या चौदह भुवन माने जाते हैं क्योंकि उनमें मानस, बुद्धि, अहंकार और चित्त को भी गिना जाता है या श्रीअरविन्द की नामावली लो जिसमें उच्चतर मन, प्रदीप्त मन, अन्तर्भासिक मन, अधिमन, अतिमन—पाँच स्तर हैं। हम श्रीअरविन्द की नामावली का उपयोग करेंगे क्योंकि वे बहुत ज़्यादा विस्तार में जाते हैं और फिर इन्हें प्राचीन भाषा के साथ जोड़ना भी आसान नहीं है।

इन आन्तरिक स्तरों के रंग भी वही हैं जैसे हमारे भौतिक स्तरों के हैं। पार्थिव स्तर पर तीन मौलिक रंग हैं : लाल, नीला और पीला। मोटे तौर पर कहा जाये तो आन्तरिक स्तरों में भी ये लाल, पीला और नीला रंग हैं। (मैं इस क्रम में कहना पसन्द करूँगा क्योंकि पीला रंग बीच में आता है।)

बीच के स्तर भी हैं जैसे प्राण और मन के बीच का स्तर। उनके रंग भी मध्यवर्ती हैं। मन का रंग पीला है और पीला और लाल मिल जायें तो यह प्राणिक मन का रंग होता है, जब लाल और गहरा लाल मिलें तो प्राणिक-भौतिक रंग होता है। हर स्तर का कोई उपस्तर होता है और इन सब

उपस्तरों और व्यक्तित्व के भागों का ठीक तरह से विकास करना होता है।

मन का एक क्रम होता है: उच्चतर मन, प्रदीप्त मन, अन्तर्भासिक मन तथा अधिमन; और नीला रंग उनके साथ सम्बद्ध है। उच्चतर मन का रंग गहरा नीला है जो उच्चतर मनों में जाकर ज़्यादा हल्का होता जाता है। अधिमानस का रंग श्वेत-नील होता है जो कृष्ण का रंग है। कृष्ण भगवान् के अवतार हैं जो पृथ्वी पर अधिमानस को प्रकट करते हैं। तो जब हम राम या कृष्ण के नील-श्वेत चित्र देखें और हमें आन्तरिक स्तरों का ज्ञान हो तो हम समझ सकते हैं कि कलाकार उनके शरीर का चित्र नहीं बना रहे बल्कि उनके प्रभा-मण्डल को चित्रित किया गया है। इसी तरह सीता और राधा को श्वेत रंग से चित्रित किया जाता है तो वह भी उनके प्रभामण्डल का द्योतक है।

(क्रमशः)

—नवजातजी

सेतु का भार तो मैंने सहा वत्स!

सुदर्शनजी अपनी भक्ति-भीनी कहानियों से ऐसा रिझा देते हैं कि मन झूम उठता है—

कहा जाता है कि महाभारत के युद्ध के पहले अर्जुन को अकेले वन में जाकर तपस्या करके भगवान् पुरारि को प्रसन्न करना था। इस समय उन्हें पाशुपत-अस्त्र के साथ-साथ देवताओं के दिव्यास्त्र भी प्राप्त करने थे।

जहाँ श्रीकृष्ण प्रकट या अप्रकट रूप में अपने अभिन्न सखा अर्जुन के साथ हों वहाँ संयोग एवं सफलताएँ अपने-आप ही आ जुटती हैं। इस यात्रा में अचानक पार्थ को पवनपुत्र श्रीहनुमानजी मिल गये। आकर्षण के किसी अदृश्य सूत्र से खिंचे दोनों आमने-सामने आकर रुक गये। परस्पर परिचय हुआ, अभिवादन हुआ और हो उठे दोनों भाव-विभोर, क्योंकि जहाँ दो भगवद्-भक्त मिलेंगे वहाँ स्वभावतः भगवद्-चर्चा होगी और आकण्ठ डूब जायेंगे वे उसमें। कुछ स्वस्थ होने के बाद अर्जुन ने हनुमानजी से अपनी यात्रा का उद्देश्य बतलाया कि उन्हें कौरवों से होने वाले अनिवार्य युद्ध के लिए दिव्यास्त्र प्राप्त करने हैं, इसीलिए तप करने वे हिमालय के दिव्य देश में जा रहे हैं। युद्ध का प्रसंग छिड़ा तो केसरीनन्दन ने त्रेतायुग

के महासंग्राम को याद करते हुए मर्यादा पुरुषोत्तम का मंगलमय चरित सुनाना प्रारम्भ कर दिया।

सेतुबन्ध का वर्णन सुन कर अर्जुन आश्चर्यचकित होकर बोले—"हे पवनपुत्र, मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि क्या श्रीरघुनाथजी और उनके अनुज सौ योजन समुद्र पर अपने बाणों का सेतु नहीं बना सकते थे कि नल, नील तथा आप सबको पर्वत ढोने का श्रम करना पड़ा!" हनुमानजी हँस पड़े—"वे सर्वसमर्थ तो सब कुछ कर सकते थे; लेकिन भाई, बाणों के द्वारा बँधे सेतु पर इतनी विशाल सेना भला कैसे पार हो सकती थी?"

अर्जुन ने सगर्व कहा—"नहीं भाई, यह आशंका तो मुझे निराधार मालूम होती है। ऐसा सेतु तो मैं क्षणों में बना सकता हूँ कि उस पर चाहे जितनी बड़ी सेना समस्त सामग्री के साथ पार हो जाये।"

केसरीनन्दन को अर्जुन का यह अभिमान असह्य लगा क्योंकि इसमें उन्हें अपने आराध्य देवता के पराक्रम के अपमान की झलक दीखी। रोष और आवेश में आकर बोल उठे—"अरे, समुद्र तो बहुत दूर की बात है, तुम इस सामने के सरोवर पर बाणों का एक सेतु तान दो और अगर वह मेरा भार सह सका तो मैं तुरन्त शरीर त्याग दूँगा।"

अर्जुन भी आवेश में आकर बोल उठे—"मेरा बनाया बाणों का सेतु अगर आपके भार से टूट जाये तो मैं भी प्रण करता हूँ कि जलती हुई चिता में कूद कर प्राण त्याग दूँगा।"

बिचारे प्रभु! उनके दो प्राणप्रिय भक्त अपने भगवान् की महानता दर्शाने के लिए यूँ उलझ पड़ें, अपना हठ पूरा न होने पर प्राण त्यागने पर उतारू हो जायें तो बिचारे भगवान् की अवस्था भी त्रिशंकु की न्याईं हो जाती है। दो परस्पर विरोधी हठों को कैसे उचित ठहरायें वे? इधर हनुमानजी का आवेश उचित था, अपने आराध्य देव का अपमान वे सहन नहीं कर सकते थे, लेकिन अर्जुन के आवेश में अपने पौरुष का अभिमान तथा अविवेक था कि वे आगा-पीछा सोचे बिना ऐसी प्रतिज्ञा कर बैठे, लेकिन अब किया क्या जाये? भक्त तो भूलें करता ही रहता है, सम्भालना तो भगवान् को पड़ता है तभी तो वे जपत्पिता, जगत्-पालक कहलाते हैं!

उधर उसी आवेश के समुद्र में बहते हुए अर्जुन ने अपना गाण्डीव चढ़ा कर बाण-वृष्टि आरम्भ कर दी। सचमुच कुछ ही क्षणों में सरोवर के एक

तट से दूसरे तट तक बाणों से बना हुआ एक सुदृढ़ सेतु बन गया। धनुष उतार कर ज़रा मुस्कुराते हुए आत्मतुष्ट धनञ्जय ने कहा—"अब आप इस पर से पार जा सकते हैं।"

पवननन्दन उठे। और उन्होंने जो भयंकर 'कनक भूधराकार' शरीर धारण किया कि उसकी कल्पना भी अर्जुन ने कभी नहीं की थी और जब आञ्जनेय ने अपने दोनों हाथों में दो विशाल गिरिशिखर उठाये तो अर्जुन का रहा-सहा धैर्य भी जाता रहा। सारा अभिमान चूर-चूर हो गया और दीखने लगी प्रज्वलित चिता नेत्रों के सम्मुख। शरों से बना यह सेतु इतना भार सह पायेगा क्या? असम्भव! और प्राणिमात्र जब अपने पराक्रम को विफल होते देखता है तो आर्त हो टेर लगाता है उस सर्वसमर्थ प्रभु की। अर्जुन भी आर्त स्वर में सहज रूप से अपने सखा को पुकार उठे—"हे कृष्ण! भक्तवत्सल, मेरी रक्षा कर लो। मुझे स्वयं मरने का भय नहीं है, लेकिन अगर मैं यहीं मर गया तो आपके आश्रित शेष पाण्डवों और पाञ्चाली के प्राण भी बचेंगे नहीं।"

अर्जुन कातर होकर उन्हें पुकारें और वे दौड़े न चले आयें!! वे भगवान् तो—अर्जुन और हनुमान्—अपने दोनों भक्तों के सम्मान की रक्षा की व्यवस्था पहले ही कर चुके थे—यह रहस्य तो उन दोनों में से किसी के भी ज्ञात न था उस समय!

भीमकाय केसरीनन्दन तो जानते ही थे कि सेतु पर पहला पग धरते ही वह चरमरा कर टूट जायेगा, लेकिन तब उनके आश्चर्य की कोई सीमा नहीं रही जब उन्होंने देखा कि उनके भार को बाणों का वह सेतु सहन कर गया! "यह अनहोनी कैसे हुई" सोचते हुए जो उन्होंने नीचे दृष्टि की तो देखा कि नीचे पानी में बहुत वेगपूर्वक रक्त आ रहा था जिससे सरोवर का पानी लाल होता जा रहा था। क्षणार्ध ध्यान के लिए हनुमानजी ने नेत्र मूँदे और "यह क्या प्रभो!" चिल्लाते हुए उसी क्षण कूद कर तट पर आ गये। केसरीनन्दन ने ध्यान में देख लिया कि स्वयं उनके वही नवघन सुन्दर आराध्य महाकच्छप बन कर सेतु के नीचे पीठ लगाये हुए हैं और रक्त उनके शरीर से ही निकल रहा है!!

उसी क्षण पवनपुत्र ने हाथों के पर्वत फेंक दिये, सामान्य आकार ग्रहण किया और पार्थ को अपने हृदय से लगा कर गद्गद स्वर में बोले—"धनञ्जय! धन्य हो तुम! धन्य हो! तुम्हारे लिए वे सर्वेश्वर कच्छप बन कर अपनी पीठ पर मेरा भार ग्रहण करने आ गये। मैं अपनी पराजय स्वीकार करता हूँ।"

और हनुमानजी वज्रनख से अपना हृदय विदीर्ण करने ही जा रहे थे कि उनके देवता—चाहे उन्हें श्रीराम कह लो या श्रीकृष्ण—प्रकट हो गये। केसरीनन्दन का हाथ कस कर पकड़ वे बोले—"हनुमान्! क्या करने जा रहे हो? तुम्हारी प्रतिज्ञा कहाँ टूटी? सेतु तुम्हारा भार तो सह नहीं सका, वह तो मैंने सहा है।"

"प्रभो!" पवनपुत्र विह्वल होकर उनके चरणों पर गिर पड़े। कण्ठ बोलने में असमर्थ हो गया। उनको बलपूर्वक उठा कर हृषीकेश ने अपने हृदय से लगा लिया।

अर्जुन को उनके इस नित्य सखा ने उलाहना दिया—"अकारण और अनवसर इस तरह प्रतिज्ञा करना विवेक का काम नहीं है पार्थ! सखे! तुम्हारे लिए ये पूज्य हैं, इनकी चरण-वन्दना करनी चाहिये तुम्हें।"

पार्थ ने धनुष दूर रख कर पवनपुत्र के चरणों में प्रणिपात किया नहीं कि उन्होंने उठा कर उसे वक्ष से लगा लिया। दोनों के अश्रु एक दूसरे को निरन्तर भिगोये जा रहे थे। अब पुरुषोत्तम बोले—"पवनपुत्र, मैं चाहता हूँ कि तुम अर्जुन को अपना सखा मान कर युद्ध में इनके ध्वजदण्ड के पास उपस्थित रहो।"

आञ्जनेय ने हाथ जोड़, नतमस्तक होकर कहा—"मैं प्रभु की आज्ञा का पालन करूँगा।"

इस प्रकार दोनों को मित्रता की अटूट डोर में बाँध कर मधुसूदन विदा हुए। कृतकृत्य दोनों भक्त एक बार फिर आलिंगन-बद्ध हो उठे। फिर प्रकृतिस्थ होने के बाद अर्जुन हनुमानजी की आराधना कर, उनसे अनुमति ले, तपस्या करने हिमालय के दिव्य देश में चले गये।

अर्जुन के नन्दिघोष-रथ की ध्वजा पर हनुमानजी की छवि तो पहले से ही थी। युद्धकाल में वे उसमें प्रविष्ट होकर स्वयं उपस्थित रहे थे।

'पुरोधा', जनवरी २००७ से —वन्दना

साभार :

फूलश्री देवड़ा सेवा कोश

रजनीगन्धा १३ ई

२५, बालीगंज पार्क, कोलकाता- ७०००१९

अभीप्सा करने वाले और "साधक" के लिए, उसके जीवन में जो कुछ आता है, परम सत्य को जानने और उसे जीने में सहायता देने के लिए आता है। विश्वास रखो, तुम विजयी होओगे। और इसका अर्थ होगा, प्रगति का एक बहुत बड़ा क़दम।

प्रेम और आशीर्वाद सहित।

श्रीमातृवाणी, खण्ड १४, पृ. २४२ — श्रीमाँ

शुभ कामनाओं सहित

श्रीअरविन्द सोसाइटी राजस्थान राज्य समिति,
जयपुर ३०२०१९ (राजस्थान)
www.aurosocietyrajasthan.org

Auroshrine

A Project of New Building Construction

SRI AUROBINDO SOCIETY

NAGPUR BRANCH

J.N. MARG, SITABULDI FORT SOUTH, NAGPUR - 440 012

- **PEACE AREA :** Establishment of Relics of Sri Aurobindo (Relics Centre) Water Body Structure (Lotus Bud in Marble) to hold relics in the Centre of the Relics Room.
- **MEDITATION HALL :** Calm environment for Spiritual Retreats (Capacity of 100 people)
- **PHOTO GALLERY :** Photos on the life of Sri Aurobindo & The Mother
- **LIBRARY :** Well equipped Library. Ample Books of Sri Aurobindo & The Mother
- **OFFICE :** Well furnished & equipped office
- **SERVICE TREE :** In the premises, saplings germinated from the seeds of the original one in Sri Aurobindo Ashram, Pondicherry over the Samadhi (Open meditation place under the Service Tree)

Sri Aurobindo Society, Nagpur welcomes Donations for "Auroshrine" Building Construction Project. Donations can also be made through direct transfer.

- Bank Transfer **(NEFT / RTGS / IMPS)**
  Bank Name : **Canara Bank, Ramdaspeth, Nagpur**
  Account No. : **1404101016479** IFSC Code : **CNRB0001404**
- Cheques / Demand Drafts - in favour of **"Sri Aurobindo Society, Nagpur"**

All doners are eligible for Tax benefits under Indian Income Tax Act under section 80G.

For more information Contact : **Dr. Prakash Mistri (Chairman) - 7066718689, Shri Sunil Badwe (Secretary) - 8554996880, Shri Omprakash Dhande (Treasurer) 9422805551**

Email : **sasnagpur@aurosociety.org**

Date of Publication: 1st April 2022
Rs. 30 (Monthly)

Registered: PY/47/2021-23
RNI No. 18135/70

मुखपृष्ठ
श्वेत कमल

अदिति-दिव्य चेतना
पवित्र, निर्मल, भव्य रूप से बलशाली
वानस्पतिक नाम: Nelumbo nucifera 'Alba'
गुलाबी कमल
अवतार-परम प्रभु ने पृथ्वी पर पार्थिव रूप धारण किया
गुलाबी कमल श्रीअरविन्द का पुष्प है।
वानस्पतिक नाम: Nelumbo nucifera
(मुखपृष्ठ के चित्र का श्रीमाँ द्वारा दिया गया आध्यात्मिक अर्थ)